राष्ट्रीय आवास बैंक

आवास भारती

वर्ष 12, अंक 42, जनवरी–मार्च, 2012

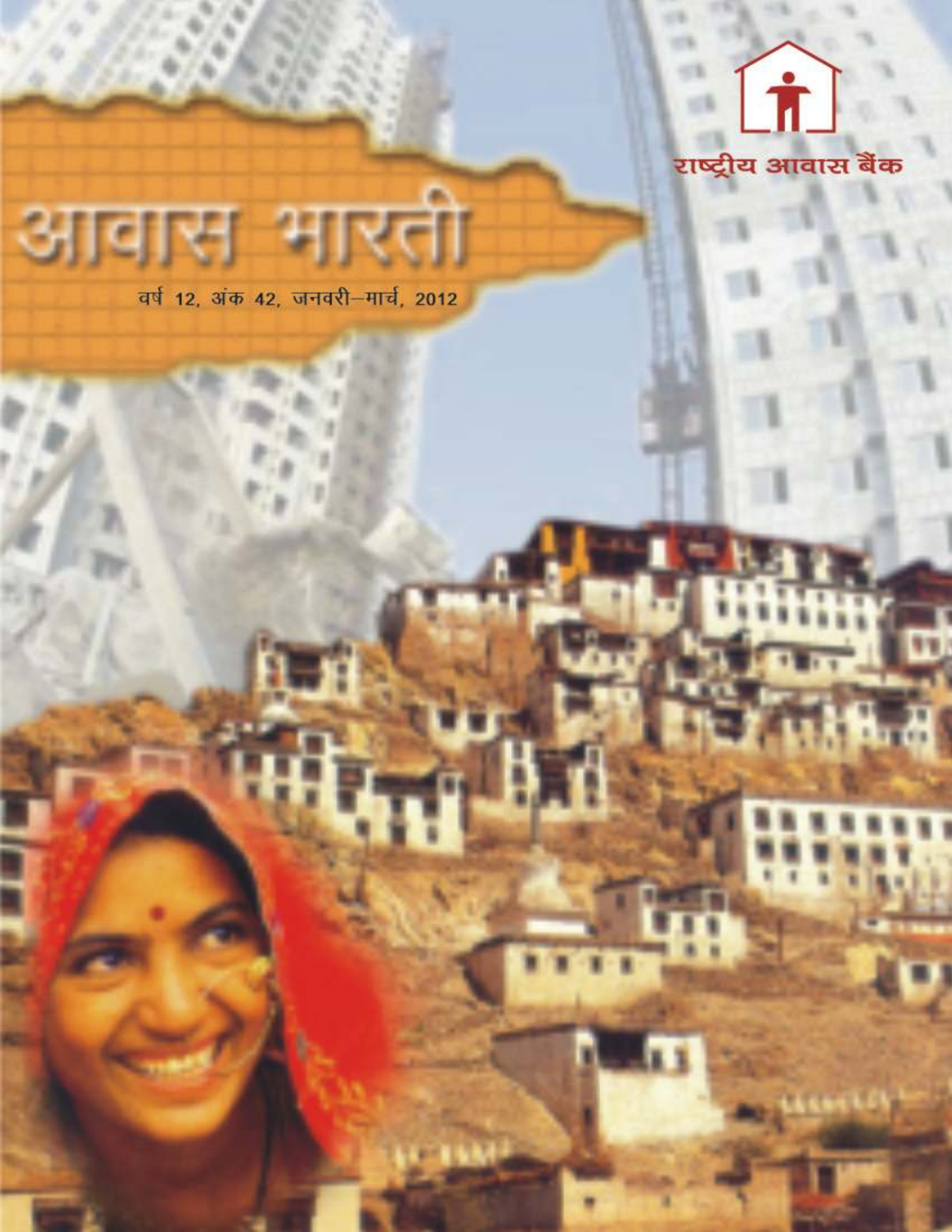

आपकी पाती

22 फरवरी, 2012

महोदय,

राष्ट्रीय आवास बैंक की राजभाषा पत्रिका आवास भारती का अक्तूबर–दिसंबर, 2011 अंक पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ।

आवास भारती को दिल्ली बैंक नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा हिंदी गृह पत्रिका प्रतियोगिता वर्ष 2010–11 हेतु प्रथम स्थान प्राप्त करने और राजभाषा शील्ड प्रतियोगिता वर्ष 2010–11 के लिए तृतीय स्थान प्राप्त करने के उपलक्ष्य में बधाई के पात्र हैं।

पत्रिका का नया रूप काफी आकर्षक है। जिस प्रकार से संपादक महोदय ने हिंदी के प्रयोग पर अपने विचार प्रस्तुत किए हैं वह विचारणीय भी है और उन लोगों पर कटाक्ष भी जो राजभाषा को आज भी प्रोत्साहन पाने का जरिया ही समझ रहे हैं। डा. बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर, सामाजिक चेतना के महान प्रवर्तक, रक्तचाप, भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास क्रम, महाराष्ट्र सरकार द्वारा छोटे फ्लैटों का निर्माण उपयोगी लेख हैं।

पत्रिका के कुशल संपादन के लिए संपादक मंडल को बधाई तथा आगामी अंको के लिए शुभ कामनाओं सहित।

भवदीय,
रवीन्द्र कुमार माथुर (आंतरिक लेखाकार)
एस.पी.चोपड़ा (चार्टर्ड अकांउटेंड), एफ–31, कनॉट प्लेस, नर्द दिल्ली

01 मार्च, 2012

महोदय,

हमें आपके बैंक की गृह पत्रिका आवास भारती के अक्तूबर–दिसंबर, 2011 अंक की प्राप्ति हुई है। धन्यवाद। नए मुख–पृष्ठ एवं नूतन साज–सज्जा के साथ पत्रिका बेहद आकर्षक लगी। पत्रिका में विभिन्न विषयों के लेखों के समावेश से यह अत्यंत उपयोगी एवं सूचनाप्रद बन पड़ी है। संपूर्ण संपादक मंडल को बधाई। दिल्ली बैंक नगर राजभाषा समिति की ओर से अतः बैंक हिन्दी गृह पत्रिका प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार पत्रिका के उच्च कोटि होने का सूचक है। **'भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास क्रम'** लेख अत्यंत उपयोगी है। **''मोबाइल–सुविधा या असुविधा''** दोनों पक्षों को उजागर करता हुआ रोचक लेख है। ''यौन उत्पीड़न संरक्षण विधेयक का सहारा'' लेख और **''काव्य सुधा''** आकर्षक है।

निश्चित रूप से गुणवत्ता एवं साज–सज्जा की दृष्टि से यह पत्रिका सर्वोत्तम पत्रिकाओं में से एक है। पुनः बधाई। शुभकामनाओं सहित।

भवदीय
ओम प्रकाश शर्मा, वरिष्ठ प्रबंधक (प्रभारी)
आंध्रा बैंक, हैदराबाद

24 फरवरी, 2012

महोदय,

आपकी पत्रिका नियमित रुप से मिल रही है। पिछले अंक से पत्रिका का रुप परिवर्तन आरंभ हो गया था और इस बार यह अत्यंत आकर्षक और पठनीय पत्रिका के अवतार में अवतरित हुई है। आवास भारती को पत्रिका संवर्ग में 2010–11 का नराकास का प्रथम पुरस्कार मिला है इसके लिए बधाई।

आपके अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री आर.वी.वर्मा का संदेश अत्यंत प्रेरणादायी है, मुझे आशा है श्री वर्मा के कुशल नेतृत्व में, रजत जयंती वर्ष में राष्ट्रीय आवास बैंक 25,000 करोड रुपये के व्यावसायिक लक्ष्य प्राप्त कर प्रगति की नई ऊँचाईयों को अवश्य ही छुएगा।

डॉ. बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर : सामाजिक चेतना के महान प्रवर्तक बहुत सारगर्भित लेख है, श्रीमती उमा सोमदेवे को बधाई। सुरभि गोयल को बधाई, इतनी प्रेरणादायक कविता लिखने के लिए। बच्चे अगर धरती,जल,वृक्षों और पर्यावरण को लेकर चिंतित होते हैं तो भविष्य सुरक्षित है। श्री धीरज कुमार का आलेख **'राष्ट्रभाषा का महत्व और उसकी उपलब्धि'** पठनीय है। **मोबाइल : सुविधा या असुविधा** समस्या का सही रूप में विश्लेषण करता है, स्तुती रूचा को इस विषय पर अवश्य ही एक पुस्तक लिखनी चाहिए। यौन उत्पीड़न संरक्षण विधेयक का दायरा मांपने का काम शिल्पी ने बड़ी पैनी नजर और धैर्य के साथ किया है। ममता की कहानी **'आगाज'** प्रभावित करती है।

पत्रिका में कविता या लेखों के माध्यम से राजनैतिक टीका–टिप्पणी करने से बचा जाए तो अच्छा होगा, इस काम के लिए व्यावसायिक पत्रिकाएं पहले से ही मुस्तैद है, यह हमारा क्षेत्र भी नहीं है। इतने प्रभावी और सुंदर अंक के लिए पुनः बधाई।

भवदीय
राजेश्वर वशिष्ठ, वरिष्ठ प्रबंधक (प्रभारी), इलाहाबाद बैंक, नई दिल्ली

05 मार्च, 2012

महोदय,

आपकी पत्रिका आवास भारती का अक्तूबर–दिसंबर, 2011 का अंक प्राप्त हुआ। दिल्ली बैंक नराकास अंतः बैंक हिंदी गृह पत्रिका प्रतियोगिता वर्ष 2010–11 में प्रथम पुरस्कार प्राप्ति पर आपको स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर परिवार के तरफ से हार्दिक बधाईयाँ। आवास भारती की सामग्री उत्कृष्ट एवं रोचक हैं तथा आवरण पृष्ठ भी पत्रिका के अनुरुप है।

आशा करते हैं कि आगे भी आवास भारती हमें नियमित रुप से प्राप्त होती रहेगी। अनेकानेक शुभकामनाएं।

भवदीय
कमल किशोर गुलाटी, सहायक महाप्रबंधक
स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर

29 फरवरी, 2012

महोदय,

आपके द्वारा प्रेषित गृह पत्रिका आवास भारती का अक्तूबर–दिसंबर, 2011 अंक प्राप्त हुआ। बहुत–बहुत धन्यवाद। ''आवास'' से संबंधित लेख हर व्यक्ति को अपने लिए नए आशियां बनाने के लिए महत्वपूर्ण सूचनाएं देता है। **''भारत उदय''** नामक लेख भारतीय अर्थव्यवस्था एवं युवा शक्ति तथा भारत के विकास की नई उम्मीदों, नई आशाओं से हमें परिचित कराता है। **''सम्मेलन''** नामक रचना आज के समाज में हिंदी की वास्तविक स्थिति को व्यंगात्मक ढंग से प्रस्तुत करने में सफल रही है तथा हिंदी के नाम पर हिंदी के शोषण करने वालों को सचेत करती है। **'' भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास क्रम''** लेख में कृषि, उद्योग में देश की स्थिति एवं भारतीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने की योजनाएं एवं सुझाव उपयुक्त हैं। इस सुंदर अंक को प्रकाशित करने के लिए आपको एवं संपादक मंडल को हार्दिक बधाई।

भवदीय
डॉ. जयन्ती प्रसाद नौटियाल, सहायक महाप्रबंधक
कार्पोरेशन बैंक, मंगलूर

09 मार्च, 2012

महोदय,

मुझे आपके बैंक की गृह पत्रिका आवास भारती का अक्तूबर–दिसंबर, 2011 अंक प्राप्त हुआ। तदर्थ हार्दिक धन्यवाद।

इस पत्रिका में बैंकिंग, अर्थव्यवस्था, राजभाषा एवं आवास इत्यादि विषयों पर प्रकाशित आलेख निःसंदेह अत्यंत ज्ञानवर्धक एवं सम–सामयिक हैं। इसके अतिरिक्त, नियमित स्तंभ में भी अच्छी सामग्री दी गई है। कुल मिलकार पत्रिका अपने उद्देश्य में पूर्णतः सफल रही है। इस कुशल संपादन के लिए संपादक मंडल को हार्दिक बधाई तथा आगामी अंकों के लिए हमारी शुभकामनाएं।

भवदीय
डॉ. उषा गुप्ता, सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा)
सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया
मुम्बई– 400 021

संपादकीय

"यदि हम अपने पौराणिक काल एवं इतिहास का अध्ययन करें तो हम पाते हैं कि भारत उस काल में सुशिक्षित एवं विज्ञान में शेष विश्व से पर्याप्त अग्रणी स्थिति में था। रामायण काल सभ्यता का आदर्श एवं महाभारत काल आदर्श और यथार्थ का युग था। आठवीं शती के बाद और विदेशी आक्रांताओं, मुगलों तथा अंग्रेजों से अब तक का शासन एवं सभ्यता आदर्शहीन घोर यथार्थ की रही है।

एक सहस्राब्दी पूर्व अमेरिका और यूरोप में अज्ञान एवं अविकास का युग था। मुगल सम्राट शाहजहां के दरबार में प्रस्तुत होकर व्यापार की अनुमति मांगने वाले एक अंग्रेज (लेखक) ने लिखा है कि अकेले शाहजहां के पास इतनी अकूत संपत्ति है, जितनी कि पूरे यूरोप की नहीं है। इसी दौरान यूरोप में शैक्षिक क्रांति आई और वे व्यापार एवं बुद्धि के बल पर विकास की सीढ़ियां चढ़ते गए। शिक्षा एवं विज्ञान के द्वारा मशीनीकरण की प्रगति ने उन्हें अंधकार से प्रकाश की ओर बढ़ा दिया।

भारत में यह स्थिति उलटती गई। एक सहस्राब्दी के पूर्व पृथ्वीराज चौहान की पराजय के साथ भारतीय सभ्यता, संस्कृति एवं शिक्षा गर्त में समा गई। इसके बाद एक हजार साल के दौरान जाति–पांत, धार्मिक भेदभाव को बहुत बढ़ावा मिला। जो युद्ध एवं मारकाट से दूर रहे उन्हें वैश्य एवं शूद्र मान लिया गया। इस दौरान धार्मिक ग्रंथों व उपनिषदों में जाति–पांत एवं धर्म की नफरत के बीज मनमाने ढंग से डालकर कुटिल राजाओं एवं विप्रों के द्वारा मनुवादी संस्कृति को पोषित किया गया ताकि उनकी विलासितापूर्ण जीवन शैली चलती रहे।

देश की आजादी के साथ ही जाति–पांत एवं छुआछूत को जड़ से खत्म किया जाना चाहिए था, जिसका मुख्य हथियार था सबको एक समान शिक्षा एवं अवसर। अंग्रेजी की बजाय हिंदी अपने राष्ट्र की एक भाषा होती और सबको एक साथ जोड़ती, एक नई सोच का एक नया समाज बनता; जिसे अपनी भाषा और अपने देश से प्यार होता, लेकिन आजादी के साथ ही सत्ता की बागडोर उन्हीं अवसरवादी काले अंग्रेजों के हाथ चली गई, जिन्होंने हिंदी की बजाय अपने अंग्रेज आकाओं की भाषा अंग्रेजी को बढ़ावा दिया। क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि पढ़ा लिखा व नई सोच का समाज बने, अन्यथा वे उन पर शासन कैसे करते। सामाजिक सुधार तब जल्दी कार्यरूप पा सकते हैं, जब हमारा संपूर्ण समाज अपनी भाषा के माध्यम से पढ़ा–लिखा एवं सुशिक्षित हो। शिक्षा एक ऐसा आलोक है जिसमें व्यक्ति को क्या अच्छा और क्या बुरा है, सोचने–समझने की एक नई दिशा सूझती है।

लॉर्ड मैकाले ने भारत में भारतीय भाषा की बजाय अंग्रेजी में राजकाज को बढ़ावा देते हुए कहा था कि अंग्रेजी भाषा की नदी ऊपर से नीचे की ओर बहनी चाहिए, यानि कि सभी अधिकारी अनिवार्य रूप में अंग्रेजी में कार्य करें। परिणामतः अंग्रेजी की नदी बह गई। आज हिंदी की नदी भी ऊपर से नीचे बहनी चाहिए, तभी नीचे तक पहुँचेगी। नीचे से ऊपर की ओर नदी न तो कभी बही है और न बहेगी। लेकिन भारत में हिंदी की नदी नीचे से ऊपर की ओर बहाने का प्रयास जारी है और पैंसठ साल बाद भी भाषा की नदी ऊपर नहीं पहुंच सकी।

जिन लोगों को अपनी भाषा का महत्व पता नहीं या जानबुझकर अवहेलना करते हैं ऐसे लोगों को राष्ट्रद्रोही ठहराया जाना चाहिए। मैं ऐसे कई मित्रों को जानता हूँ जो बहुत अच्छी हिंदी बोलते हैं परंतु लिखते नहीं। जबकि वे लिख सकते हैं। और यदि उनसे लिखने को कहा जाए तो उन्हें हाथ जोड़कर माफी मांगना मंजूर है, मगर हिंदी में दो शब्द लिखना मंजूर नहीं। मैं ऐसे लोगों को क्या कहूँ? ऐसे अधिकतर लोग हिंदी भाषा–भाषी प्रदेश के हैं। मुझे कुछ ऐसे अहिंदी भाषी लोग मिले जो हिंदी में बोलने व लिखने को तैयार रहते हैं। सारा का सारा खेल मानसिकता का है। जब हिंदी में कार्य करने के लिए सरकार का वरदहस्त (एक्ट) है तब भय व संकोच क्यों? अपनी भाषा के बिना जीने वाला मनुष्य स्वत्वहीन है। सदा सीखने को तत्पर मन, सब कुछ पा लेता है। निज भाषा के प्रयोग से गौरवान्वित होकर ही फ्रांस, जर्मनी, रूस, चीन और जापान जैस देश विकास के चरम पर पहुंच सके। मैं आप सबको अपनी भाषा के माध्यम से अपने मातृभूमि के विकास में जुट जाने हेतु आह्वाहन करता हूँ।"

जी.एन. सोमदेवे
संपादक एवं सहा० महाप्रबंधक
मो.: 9560900451

आवास भारती

राष्ट्रीय आवास बैंक की राजभाषा पत्रिका

(केवल आंतरिक परिचालन हेतु)

पंजी. संख्याः दिल्ली इन/2001/6138

वर्ष 12, अंक 42, जनवरी–मार्च, 2012

प्रधान संरक्षक

राज विकास वर्मा, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक

संयुक्त संरक्षक

अर्णव रॉय, कार्यपालक निदेशक

संरक्षक

एन.उदय कुमार, उप महाप्रबंधक

संपादक

जी.एन. सोमदेवे, सहायक महाप्रबंधक

सहायक संपादक

अमर सिंह सचान, राजभाषा अधिकारी

संपादक मंडल

रंजन कुमार बरुन, क्षेत्रीय प्रबंधक

किशोर कुंभारे, क्षेत्रीय प्रबंधक

मोहित कौल, प्रबंधक

राधिका मूना, उप प्रबंधक

रुचि वशिष्ठ, सहायक प्रबंधक

प्रभात रंजन, सहायक प्रबंधक

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में अभिव्यक्त विचार, मौलिकता एवं तथ्य आदि लेखकों के अपने हैं। संपादक या बैंक का इनके लिए ज़िम्मेदार अथवा सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

राष्ट्रीय आवास बैंक

(भारतीय रिज़र्व बैंक के संपूर्ण स्वामित्व में)

कोर-5ए, 3–5 तल, इंडिया हैबिटेट सेंटर,

लोधी रोड, नई दिल्ली– 110003

विषय-सूची

	विषय	पृष्ठ सं.
1.	संपादकीय	1
2.	बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक महोदय का संदेश	3
3.	राष्ट्रीय आवास बैंक परिवार समाचार	4
4.	मीडिया और समाज	8
5.	यह कैसा विकास	11
6.	सपनों का घर बना दुःस्वपन	13
7.	हिंदी बनाम राजभाषा	15
8.	उफ	17
9.	औरत की स्थिति में सुधार का प्रस्ताव	18
10.	अर्थव्यवस्था को खाती दीमक	20
11.	भय की गांठ, अभय की कुंजी	22
12.	भारत में आवास बाजार का समसामयिक रुझान	25
13.	रहना नहीं देश विराना जी	28
14.	आपदा प्रबंधन और हम	31
15.	भारत में तीव्र गति यातायात के साधनों की अनिवार्यता	33
16.	संस्कृति ही है भारत की एकता का आधार	35
17.	हृदय रोग व तपेदिक रोग	37
18.	काव्य सुधा	39

राष्ट्रीय आवास बैंक
के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक
श्री राज विकास वर्मा
की ओर से पाठकों के लिए

संदेश

आप एवं आपके परिवारजनों को नववर्ष मंगलमय एवं सुख समृद्धि पूर्ण हो। बैंक की ओर से हम आप सभी को हार्दिक शुभकामनायें देते हुए अत्यंत हर्ष के साथ यह बताना चाहते हैं कि हमारा राष्ट्रीय आवास बैंक इस वर्ष 2012 के मध्य में अपनी रजत जयंती वर्ष में प्रवेश कर रहा है। किसी भी संस्थान के कार्यकाल में रजत जयंती का विशेष महत्व होता है। यह अवधि उस संस्थान की परिपक्वता का प्रतीक होती है। इस रजत जयंती के शुभ अवसर पर हमारा बैंक अनेक कार्यक्रम आयोजित कर रहा है। इसी क्रम में, हम अपने बैंक की गृह पत्रिका–'आवास भारती' का एक विशेषांक निकालने की योजना बना रहे हैं।

इस विशेषांक में हम अपने बैंक के इतिहास एवं विकास के साथ–साथ आवास–वित्त, ग्रामीण आवास, किफायती आवास, पुनर्वित्त, सरकारी सब्सिडी योजनाओं तथा सरकारी, अर्ध सरकारी एवं गैर सरकारी/निजी क्षेत्र के आवास एवं आवास वित्त योजनाओं के विकास एवं प्रगति आदि से संबद्ध तथा अन्य सामान्य आर्थिक विषयों पर विभिन्न विशेषज्ञों/लेखकों/अधिकारियों से प्राप्त लेखादि प्रकाशित करने की मंशा रखते हैं।

इस संदर्भ में, हम अपनी पत्रिका के सुधी पाठकों एवं विभिन्न संस्थानों/बैंकों के कर्मियों/अधिकारियों से अनुरोध करते हैं कि आप लोग हमारे इस विशेषांक हेतु उपरोक्त किसी भी विषय पर बहुमूल्य विचार, अनुभव, संकल्पना, केस स्टडी या उद्धरण आदि पर लेख/आलेख/अनुच्छेद/कविता/कहानी के रूप में भेज सकते हैं। हम हिंदी में लिखित या टंकित लेखों के साथ–साथ अंग्रेजी में लिखित या टंकित लेखों का स्वागत करते हैं, जिन्हें हिंदी में अनूदित कर विशेषांक में स्थान दिया जाएगा।

इस अवसर पर हम आपसे सक्रिय सहयोग, समर्थन एवं समन्वय की आशा करते हैं। आप लोग अपने लेखों या रचनाओं को जल्द से जल्द पत्रिका के संपादक को भेज सकते हैं।

सधन्यवाद।

(राज विकास वर्मा)

राष्ट्रीय आवास बैंक परिवार समाचार

10–11 फरवरी, 2012 को पोर्ट ब्लेयर (अंडमान–निकोबार) में प्रशिक्षण

राष्ट्रीय आवास बैंक ने दिनांक 10–11 फरवरी, 2012 को पोर्ट ब्लेयर में "खुदरा आस्तियों– अनुप्योज्य प्रबंधन एवं वसूली (रिटेल एसेट्स–एनपीए मैनेजमेंट एंड रिकवरी)" पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में राष्ट्रीय आवास बैंक के क्षेत्रीय प्रबंधक श्री आत्माराम मुदियम ने "राष्ट्रीय आवास बैंक" पर प्रस्तुति दी। प्रथम सत्र में इमेज (इंडियन बैंक मैनेजमेंट एकेडेमी फॉर ग्रोथ एंड एक्सीलेंस) के मुख्य प्रबंधक एवं संकाय श्री परेश चंद्र दास ने "आईआरएसी (इनकम रिकॉगनिशन एंड एसेट्स क्लेरिफिकेशन) नियमों एवं लाभप्रदता पर अनुप्योज्य आस्ति (एनपीए) के संबंध में भारतीय रिजर्व बैंक के निर्देशक सिद्धांतों" से परिचित कराया। द्वितीय सत्र में एसबीआई स्टाफ कॉलेज के उप महाप्रबंधक एवं वरिष्ठ संकाय श्री आर.गणेश ने "कड़ी निगरानी करने पर विशेष बल देने के साथ उत्तर–संस्वीकृति प्रक्रियाओं" से अवगत कराया। अगले सत्र में एसबीआई स्टाफ कॉलेज के सहायक महाप्रबंधक एवं संकाय (सेवानिवृत्त) श्री एल.राजन ने "अनर्जक आस्तियों– के कारण, लक्षण एवं इससे बचने के उपाय" पर चर्चा की। अंतिम सत्रों में श्री एल.राजन एवं श्री आर.गणेश ने "वसूली के उपायों" से अवगत कराया एवं अन्य महत्वपूर्ण जानकारियाँ दी। इसके बाद प्रशिक्षुओं को प्रमाण पत्र प्रदान किए गए।

20–22 फरवरी, 2012 को गैंगटोक (सिक्किम) में प्रशिक्षण

राष्ट्रीय आवास बैंक ने भारतीय राष्ट्रीय सहकारी आवास संघ (एनसीएचएफ) की साझेदारी में 20–22 फरवरी, 2012 को गैंगटोक, सिक्किम में आवास वित्त के लिए सहकारी समितियों पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्घाटन सिक्किम सरकार के सचिव एवं आईएएस श्री ए.के. छेत्री ने किया। एनसीएचएफ के अध्यक्ष एवं मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ के पूर्व केबिनेट मंत्री श्री एस.एन. शर्मा ने अध्यक्षीय भाषण दिया। राष्ट्रीय आवास बैंक के प्रशिक्षण समन्वयकर्ता श्री परिचय ने धन्यवाद प्रस्तुत किया। "भारत में आवास की स्थिति एवं राष्ट्रीय आवास बैंक की भूमिका" और "भारत में ग्रामीण आवास के संदर्भ में आवास वित्त" पर राष्ट्रीय आवास बैंक के क्षेत्रीय प्रबंधक श्री आत्माराम मुदियम ने अभिभाषण दिया। राष्ट्रीय आवास बैंक के प्रबंधक श्री एम.बी.राय ने "राष्ट्रीय आवास बैंक की वित्त योजना" और "किफायती आवास संकल्पना" पर प्रस्तुती दी। एम.एल. खुराना ने "भारत में सहकारी आवास" पर संबोधित किया। सिक्किम सहकारी संघ के मुख्य कार्यपालक अधिकारी श्री एन.एल. भंडारी ने "सिक्किम में सहकारी आंदोलन का विहंगावलोकन" पर अभिभाषण दिया।

1 मार्च, 2012 को करनूल (आंध्र प्रदेश) में प्रशिक्षण

राष्ट्रीय आवास बैंक ने दिनांक 1 मार्च को आंध्रप्रदेश के करनूल में "ग्रामीण आवास वित्त" पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया। इस कार्यक्रम का उद्घाटन आंध्रा प्रगति ग्रामीण बैंक के क्षेत्रीय प्रबंधक ने किया। प्रथम सत्र में राष्ट्रीय आवास बैंक के क्षेत्रीय प्रबंधक श्री आत्माराम मुदियम ने राष्ट्रीय आवास बैंक की भूमिका, ग्रामीण आवास परिदृश्य एवं ग्रामीण आवास वित्त के लाभों पर चर्चा की। द्वितीय सत्र में राष्ट्रीय आवास बैंक के प्रबंधक श्री आर.के. अरविंद ने ग्रामीण आवास वित्त की ईशप सहित राष्ट्रीय आवास बैंक के लक्ष्यों, अभिक्रम एवं योजनाओं के बारे में बताया। इसके बाद तीसरे एवं चौथे सत्र में स्टेट बैंक स्टाफ ट्रेनिंग कॉलेज के उप महाप्रबंधक एवं संकाय श्री आर. गणेश ने प्रसंस्करण कार्रवाई, संस्वीकृति, अनुवर्ती एवं विधि पक्षों सहित हाउसिंग ऋणों की वसूली की तकनीक के बारे में बताया।

राष्ट्रीय आवास बैंक में

वर्ष 2012 की पहली तिमाही के दौरान निम्नांकित अधिकारियों ने पदोन्नति प्राप्त की–

उप प्रबंधक (स्केल II) से प्रबंधक (स्केल III) में (16 जनवरी, 2012 से प्रभावी) पदोन्नति

सुश्री पूनम कुमारी चौरसिया

श्री विक्रम देवा

श्री हेमंत कुमार गोपालकृष्णन

श्री वी. मागेश कुमार

श्री आर.के. अरविंद

सहायक प्रबंधक (स्केल I) से उप प्रबंधक (स्केल II) में (23 जनवरी, 2012 से प्रभावी) पदोन्नति

सुश्री शालू देशपांडे

श्री अजय कुमार

श्री आशीष जैन

श्री आदित्य सौरभ

सुश्री सोनिया भल्ला

बैंक एवं आवास भारती की ओर से इन सभी अधिकारियों को हार्दिक बधाई

"किफायती आवास बाजार में स्थाईत्व के साथ वृद्धि"

अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन, नई दिल्ली

– एक संक्षिप्त रिपोर्ट

राष्ट्रीय आवास बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री आर.वी. वर्मा मुख्य सत्र के प्रारंभ में स्वागत संबोधन एवं उद्घाटन भाषण देते हुए।

राष्ट्रीय आवास बैंक ने नई दिल्ली में दिनांक 30 एवं 31 जनवरी, 2012 को एशिया पैसिफिक यूनियन फॉर हाउसिंग फाइनेंस (एपीयूएचएफ) तथा एशिया पैसिफिक मिनिस्ट्रियल कॉन्फ्रेंस ऑन हाउसिंग एंड अर्बन डेवलेपमेंट (एपीएमसीएचयूडी) के सहयोग से "किफायती आवास बाजार में स्थाईत्व के साथ वृद्धि" विषय पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन में बड़ी संख्या में अंतर्राष्ट्रीय प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया तथा इसे बांग्लादेश, इंडोनेशिया, इराक, जापान, मलेशिया, मंगोलिया, पाकिस्तान, श्रीलंका तथा थाईलैंड से आए वक्ताओं के साथ–साथ इंटरनेशनल फाइनेंस कार्पोरेशन, वर्ल्ड बैंक, एशियन डेवलपमेंट बैंक तथा के.एफ.डब्ल्यु (जर्मनी) के प्रतिनिधि वक्ताओं ने संबोधित किया। इसके साथ ही इस सम्मेलन में गैर–सरकारी संगठनों के प्रतिनिधियों, शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं, नीति–निर्माताओं ने भी भाग लिया।

भारत सरकार के आवास एवं शहरी गरीबी उन्मूलन मंत्रालय तथा संस्कृति मंत्रालय की माननीया मंत्री कुमारी शैलजा के द्वारा उद्घाटन एवं मुख्य संबोधन

इस सम्मेलन का उद्घाटन भारत सरकार के आवास एवं शहरी गरीबी उन्मूलन मंत्रालय एवं संस्कृति मंत्री माननीया कुमारी शैलजा के द्वारा किया गया। उद्घाटन सत्र में भा.रि.बैंक के उप गर्वनर श्री एच. आर. खान, भारत सरकार के योजना आयोग के सदस्य श्री अरूण मैरा, भारत सरकार के आवास एवं शहरी गरीबी उन्मूलन मंत्रालय के सचिव श्री ए.के. मिश्रा, एचडीएफसी बैंक के अध्यक्ष श्री दीपक एस. पारिख, राष्ट्रीय आवास बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री आर.वी. वर्मा तथा एपीयूएचएफ के महासचिव श्री जियागम रिजवी ने भी भागीदारी की।

वर्ष 2011 में भारत में आवास की प्रवृत्ति एवं प्रगति रिपोर्ट को भारत सरकार की आवास एवं शहरी गरीबी उन्मूलन मंत्रालय एवं संस्कृति मंत्री माननीया कुमारी शैलजा के द्वारा विमोचन

भारत सरकार के आवास एवं शहरी गरीबी उन्मूलन मंत्रालय एवं संस्कृति मंत्री माननीया कुमारी शैलजा ने रा.आ. बैंक के प्रकाशन "भारत में आवास की प्रवृत्ति एवं प्रगति, 2011" का विमोचन किया। इसके साथ ही आपने आईएफसी– वर्ल्ड बैंक– रा.आ.बैंक की किफायती आवास हेतु हरित हस्तक्षेपों पर भारत में आवास में प्रवृत्ति एवं प्रगति रिपोर्ट 2011 का भी विमोचन किया।

भारतीय रिजर्व बैंक के उप गवर्नर श्री एच.आर. खान

सम्मेलन में चर्चा के विषय

इस सम्मेलन में विभिन्न देशों से आए विभिन्न विषयों एवं क्षेत्रों से जुड़े लगभग 150 प्रतिनिधियों एवं वक्ताओं ने भाग लिया और अपने महत्वपूर्ण एवं बहुमूल्य अनुभवों की भागीदारी की। यह सम्मेलन मुख्यतः एशिया प्रशांत क्षेत्र के उभरते अनेक मुद्दों तथा किफायती आवास के सुविचारित भिन्न पहलुओं पर केन्द्रित था। इस सम्मेलन के सत्रों में निम्नांकित विषय सम्मिलित थे–

(i) विभिन्न देशों में भूमि, तकनीकी, ऋण एवं सांस्थानिक व्यवस्थाओं के संदर्भ में विशेष रूप से वहनीयता पर केन्द्रित आवास एवं आवास वित्त परिदृश्य
(ii) मांग एवं आपूर्ति की ओर से हस्तक्षेप के माध्यम से किफायती आवास बाजार में विस्तार एवं वृद्धि
(iii) माइक्रो आवास वित्त में माइक्रो फाइनेंस (सूक्ष्म वित्त) संस्थानों की भूमिका
(iv) प्राथमिक बंधक (मॉर्टगेज) बाजार की वृद्धि एवं प्रत्याशायें
(v) शहरी नियोजन यथा–नियोजन प्रक्रिया, विकास योजना/ रणनीतियों/ जोनल प्लान के गठन आदि से जुड़े मुद्दे।
(vi) आवास बाजार में अपेक्षित वित्तीय क्षेत्र के हस्तक्षेप तथा इस संबंध में आवश्यक संरक्षण/अपेक्षित जोखिम न्यूनीकरण उपाय।
(vii) आवास के क्षेत्र में ऊर्जा–क्षम (के क्षेत्र) के वैश्विक अनुभव
(viii) एमबीएस तथा कोवरेड बोंड्स पर विशेष जोर के साथ वित्तीय संकट के बाद विभिन्न देशों के लिए मॉर्टगेज फंडिंग रणनीतियां

विशेष रूप से, हाल ही में मार्टगेज उद्योग द्वारा झेली जानेवाली मुसीबतों के पृष्ठ भूमि के मद्देनजर उद्योग की विशिष्ट अपेक्षाओं पर सम्मेलन में चर्चा की गई। इसके साथ ही सम्मेलन में नीति विकास, उत्पाद नवोन्मेषन, किफायती या वहनीय मॉडल, आवास वित्त बाजार में हुए विकास एवं हाल ही के बदलावों, जो कि कई देशों में देखे गए, जैसे तमाम सुविचारित मुद्दों पर चर्चा की गई। इन सभी विषयों पर हुई कार्यवाही एवं चर्चा के निष्कर्षों को रा.आ. बैंक एवं एपीयूएचएफ की वेबसाइट में डाला गया।

डॉ. सुबीर गोकर्ण, उप गवर्नर, भा.रि.बैंक, सुश्री क्रिस्टाइन इंगस्ट्रोर्म, एशिया विकास बैंक तथा श्री स्कॉट क्यूसेनबेरी, उपाध्यक्ष, जेनवर्थ, रैलियह, यूएसए

सम्मेलन के निष्कर्ष

सुविचारित चर्चाओं एवं प्रस्तुतियों ने एशिया पैसिफिक क्षेत्र के देशों में किफायती आवास बाजार के क्षेत्र में मुद्दों एवं चुनौतियों को उजागर किया।

सम्मेलन में आवास, वित्त, भूमि, प्रौद्योगिकी, ऊर्जा सक्षमता तथा किफायती आवास पर कार्यशील विन्यास–समाधानों हेतु विनियामक ढांचे से संबद्ध अनेक विषयों पर विचार–विमर्श किया।

एचडीएफसी लि. के अध्यक्ष श्री दीपक पारिख

भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, थाइलैंड, इंडोनेशिया एवं मंगोलिया जैसे देशों की विशिष्टताओं को ध्यान में रखते हुए किफायती आवास एवं निम्न आय आवास वित्त के मुद्दों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुभवों, परिदृश्यों एवं नीति पर प्रस्तुतियों ने सम्मेलन के एक महत्वपूर्ण हिस्से का रूप लिया। इस सम्मेलन में विभिन्न देशों के सफलता प्राप्त हस्तक्षेप एवं विचार–विमर्श में आपूर्ति पक्षीय मुद्दों, आवास माइक्रो वित्त में माइक्रो फाइनेंस संस्थानों की भूमिका; प्राथमिक मॉर्टगेज बाजार की वृद्धि, संभावनाओं, किफायती आवास हेतु शहरी नियोजन, निम्न आय आवास हेतु प्रतिभूतिकरण, आवासीय क्षेत्रों में ऊर्जा सक्षमता, किराया आवासों की संभावनायें, मॉर्टगेज वित्त सहायता में जोखिम न्यूनीकरण आदि को भी शामिल किया।

समापन सत्र को संबोधित करते हुए रा.आ.बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री आर.वी. वर्मा

मीडिया और समाज

– जी.एन. सोमदेवे, सहा. महाप्रबंधक

मीडिया और समाज का न जाने कितना पुराना नाता है, लेकिन न जाने क्यों हमारा समाज और मीडिया एक दूसरे को शक की निगाह से देखते हैं और इस बात पर बहस सी छिड़ गई है कि क्या सच में हमारे जीवन और समाज पर मीडिया की दखलंदाजी बहुत अधिक हो गई है या फिर यूं ही हल्ला मचाया जा रहा है। हालांकि यह भी सच है कि ड्राइंगरूम में रहने वाला इडियट बॉक्स न जाने कब हमारे बेडरूम तक आ पहुंचा और कब हम इसके आदी हो गए। आज कहीं नेता मीडिया पर अपनी बातों को तोड़ मडोड़कर पेश करने का दोषारोपण करते हैं तो कहीं देश के सेलीब्रिटी अपनी निजी जिंदगी में दखलंदाजी का आरोप लगाते हैं। सच्चाई यह है कि देश में मीडिया के सकारात्मक प्रभाव से कहीं ज्यादा उसके नकारात्मक प्रभाव पर बहस हो रही है और उस पर शिकंजा कसने की बात चल रही है। आलम यह है कि लोग मीडिया के सकारात्मक कार्यों पर न के बराबर चर्चा करते दिखते हैं। फिर हमारी सोच, जिसमें मीडिया शब्द के आते ही हम खबरिया चैनल से ऊपर उठ ही नहीं पाते हैं; कुछ चैनलों की टीआरपी की अंधी दौड़ का खामियाजा इस शब्द को उठाना पड़ रहा है।

खबरिया चैनलों का प्रभाव :

असलियत यह है कि ये 24 घंटे वाले खबरिया चैनल मीडिया का एक अंग मात्र हैं। मीडिया का समाज पर प्रभाव को समझने से पहले हमें यह समझना होगा कि आखिर मीडिया है क्या? और इसके समाज पर किस प्रकार के प्रभाव पड़ सकते हैं ?मीडिया के एक विद्वान मार्सल मैक्लुहान के अनुसार मीडिया लोगों तक संदेश पहुंचाने का जरिया है और मीडिया कोई भी हो सकता है चाहे वह एक व्यक्ति हो, समूह हो या फिर समुदाय हो। मीडिया का मतलब खबरिया चैनल के अलावा अखबार, पत्रिकाएं, फिल्म, धारावाहिक, नुक्कड़–नाटक, लोकनृत्य, साहित्य, पुस्तकें आदि कुछ भी हो सकता है। मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ माना जाता है और हमारे देश में इसे बाकी के तीन स्तंभों पर निगरानी करने और सलाहकार की भूमिका निभाने पर जोर दिया गया है। अगर हम अपने इतिहास पर ध्यान दें तो इस स्तंभ ने अपनी भूमिका बखूबी निभाई है। बात चाहे स्वतंत्रता से पहले जन–जागरण की हो या फिर स्वतंत्रता के बाद विकास के पहिए को बाकी के तीन स्तंभों के साथ आगे बढ़ाने की हो, मीडिया ने हर जगह अपनी सार्थकता सिद्ध की है। लेकिन हाल के नव–उपनिवेशवादी युग में मीडिया में आमूल–चूल परिवर्तन देखने को मिले हैं और मीडिया सलाहकार की जगह निर्णायक की भूमिका में दिखने लगा है। जो एक खतरनाक प्रवृत्ति बन रही है। एक तरफ देश के राजनीतिज्ञ, पूंजीपति और पुराने मीडियाकर्मी हैं जो इसे घातक मान रहे हैं तो वहीं आज के आधुनिक मीडियाकर्मी इसे समय की मांग और शेष तीन स्तंभों को घुन की तरह चाट रहे भ्रष्टाचार के इस युग में इसे न्यायसंगत ठहराने में कोई कोर–कसर नहीं छोड़ रहे।

लेकिन इन सबके बीच आम जनता क्या कर सकती है, किसे सही माने और किसे गलत और क्या सचमुच समाज को मीडिया इतनी बुरी तरह से प्रभावित करता है, ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जो हमें संशय में डाल देते हैं। हम ऐसा मान लें कि मीडिया का समाज पर केवल बुरा प्रभाव ज्यादा पड़ रहा है तो ऐसा भी नहीं है। यह मीडिया का ही परिणाम है कि चाहे जेसिका लाल, प्रियदर्शिनी मट्टू हत्याकांड हो या फिर चारा से लेकर कॉमनवैल्थ जैसे घोटाले और संसद में प्रश्न पूछने के लिए पैसे लेने का मामला , ये कांड उजागर हुए और सरकार और न्यायालय सभी को इन पर कार्रवाई करनी पड़ी और पीड़ितों को पूरा न सही लेकिन न्याय तो मिला।

आज हम इन खबरिया चैनलों को चाहे जितना कोस लें अगर आज सरकार किसानों को मुफ्त बिजली, कम दामों पर खाद और उनकी फसल की बीमा सुविधा दे रही हैं तो उसमें इसी मीडिया का हाथ है जिसने लगातार विदर्भ के किसानों की दुर्दशा को दर्शाया और बुंदेलखंड के लोगों की नारकीय जिंदगी को दर्शाया। न्यूज चैनलों के कवरेज का ही नतीजा है कि इलाहाबाद हाईकोर्ट ने इस पर स्वतः संज्ञान लिया और राज्य सरकार को जल्द से जल्द कार्रवाई करने का आदेश दिया है। हमारे सेलीब्रिटी मीडिया पर निजी जिंदगी में दखलंदाजी का आरोप लगाते हैं लेकिन इसी दखलंदाजी ने वर्ष 2000 में कास्टिंग काउच की ऐसी खबरें दिखाई कि फिल्म उद्योग जगत के नामीं लोगों की नींद उड़ गई और मीडिया ने सुनहरी दुनिया का सपना लिए आए नवयुवकों और युवतियों को उस शोषण की दलदल से बाहर निकालने में अहम भूमिका निभाई। इसी प्रकार अगर बात भ्रष्टाचार की करें तो आपको फिल्म "नायक" में अनिल कपूर का वह डायलॉग तो याद होगा "सारा देश करप्शन से ऊपर से लेकर नीचे तक डूबा हुआ है।" इसे नियंत्रित करने में मीडिया के स्टिंग ऑपरेशनों की क्या भूमिका रही, यह किसी से भी छुपा नहीं है , चाहे वह आपॅरेशन दुर्योधन हो या फिर कोबरा पोस्ट का तहलका कांड। इनसे भ्रष्टाचार पूरी तरह खत्म तो नहीं हुआ लेकिन इसपर बहुत हद तक लगाम तो जरुर लगी है। हाल ही का उदाहरण लें तो भ्रष्टाचार और मंहगाई के खिलाफ विपक्षी दल से कहीं ज्यादा हो–हल्ला मीडिया द्वारा किया गया। कभी गरीबों की थाली से दाल गायब होने का मार्मिक दृश्य तो कभी हमारे नेताओं के बीच इस मुद्दे पर खींचतान को दिखा कर। यह मीडिया ही है जिसने बढ़ रही मंहगाई पर देश के सिपेहसालारों के वक्तव्य और कर्तव्य में अंतर को दर्शाकर आम जनता को इसके विरुद्ध खुद लड़ने की प्रेरणा दी। मीडिया ने बाबा रामदेव और अन्ना हजारे के अनशन को लाइव कवर कर भ्रष्टाचार के खिलाफ ऐसा माहौल बनाया कि शायद संसदीय इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ कि लालकिले से 15 अगस्त का प्रधानमंत्री का आधा भाषण लगभग भ्रष्टाचार के ही नाम रहा। जो न सिर्फ भ्रष्टाचार के प्रति सरकार की चेतना को दर्शाता है बल्कि मीडिया किस प्रकार समाज को प्रभावित कर सकता है इसे भी दिखाता है। कुछ लोग कहते हैं कि आज का मीडिया लोगों और विशेष रूप से भारतीय युवावर्ग को गुमराह कर रहा है। ये बात गले से उतरने लायक नहीं है। इसका कारण है कि हमारे युवा इतने गैर–जबाबदेह नहीं कि किसी के आह्वाहन मात्र से आंख मूंदकर उसके पीछे हो लें और उपद्रव करें। अगर हमारा मीडिया विश्वसनीय नहीं होता तो आज भी संसद में

किसी भी मुद्दे पर इसकी प्रतियों या फुटेज को आधार क्यों बनाया जाता है। आज भी मीडिया ही है जो समय–समय पर गरीबों का सर्वे करा रहा है, बिहार में कोसी नदी में बाढ़ से पहले ही लोगों को सावधान करता है, गंगा के सुंदरवन डेल्टा के नष्ट होने की कहानी डॉक्यूमेंटरी के जरिए बयां करता है और दलितों पर होने वाले अत्याचारों को पेश करता है। राजधानी–रेलगाड़ी दुर्घटना से लेकर कालका मेल दुर्घटना को दिखा रेलवे की पोल खोलता है और समाज को सरकार का वह चेहरा दिखाता है जो लोगों के सामने शायद ही आ पाता। ये मीडिया ही है जिसने जीवनदायनी गंगा और यमुना में सरकारी अनदेखी की खबरों को पहली बार दिखाया और इनके नाम पर मिली सरकारी सहायता की बंदरबांट की कहानी लोगों के सामने प्रस्तुत की। मीडिया ने ही हवाला के माध्यम से "घोटला" जैसे शब्द से लोगों को परिचित करवाया और नौकरशाही से निजात पाने के लिए "सूचना का अधिकार" पर लोगों को जागरुक बनाया। ये वही मीडिया है जिसपर भेदभाव व दंगों को भड़काने का आरोप लगा है लेकिन सच्चाई यह है कि जब भी देश में दंगे या बाहरी आक्रमण हुए या देश के किसी कोने में बाढ़ या भूकंप आई तो इसने लोगों को एकदूसरे की मदद करने की पेशकश की और अपने माध्यम से सरकार की सहायता की।

सिनेमा के बहानेः

बचपन से हम पढ़ते आए हैं कि सिनेमा समाज का दर्पण है। सिनेमा में थोड़ा घटा –बढ़ाकर वही दिखाया जाता है जो हमारे आस–पास के समाज में घटित होता है, और यह बात एक हद तक सही भी है। बात पुराने जमाने की करें तो प्रायः ऐसी फिल्म बनती थीं जिसमें संयुक्त परिवार, बाल विवाह, सती प्रथा और भक्ति पर ही जोर था और समाज इन्हीं समस्याओं और प्रथाओं से जूझ रहा था। इन फिल्मों ने समाज और हम सब को इन कुप्रथाओं के दुष्प्रभाव और उनसे लड़ने का रास्ता अप्रत्यक्ष तौर पर दिखाया। उदाहरण के तौर पर महान निर्देशक सत्यजीत रॉय की फिल्म "पाथेर पंचाली" जिसमें देश की गरीबी और बाल विवाह जैसी कुप्रथा पर कुठाराघात किया गया। इसी प्रकार 70 के दशक में समाज सरकार, पुलिस और व्यवस्था से परेशान था। शोले के रूप में खुद एक पुलिस अफसर को दो अपराधियों से सहायता लेते देखा गया। अन्याय के खिलाफ लड़ते आम आदमी के साथ ही खुद को जोड़कर देख रहा था। इसी कारण जब फिल्मों में अमिताभ बच्चन का पदार्पण हुआ और इस एंग्री यंग मैन ने फिल्मों में समाज का प्रतिनिधित्व किया तो लोगों को यह बहुत पसंद आया और वे खुद को 'विजय' के किरदार में खोजने लगे। दरअसल अगर हम गौर से देखें तो यह मात्र विजय का अभ्युदय नहीं था बल्कि लोगों में जागरुकता आने लगी। फिल्म के बहाने समाज की कुरीतियों और कालाबाजारी, नेताओं की भ्रष्टता और राजनीति के अंधेरे भाग का ऐसा चेहरा दिखाया। इसी का नतीजा था कि देश में राजनीतिक जागरुकता और व्यवस्था में बदलाव की एक बयार बह चली। अगर हम ऐसा कहें कि सिनेमा समाज के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चला तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। देश 90 के दशक में जब आंतकवाद का दंश झेल रहा था जो आज भी बदसतूर जारी है तो फिल्म जगत ने रोजा, बॉम्बे, दिल से, जैसी फिल्मों के माध्यम से इसे दिखाया और इसके समाधान और इसमें आने वाली राजनीतिक अड़चनों का भी बखूबी चित्रण किया। हाल के दिनों में रंग दे बसंती जैसी फिल्मों ने जहां युवाओं में जोश भरने का काम किया है, वहीं मुन्नाभाई की गांधीगीरी ने समाज में फिर से गांधीवादी विचारधारा को जीवित किया है और इसी का नतीजा है कि कल तक जो आंदोलन तोड़फोड़ के बिना पूरे नहीं होते थे। वहीं आज लोग गांधीगीरी के द्वारा प्रदर्शन कर रहे हैं, चाहे बात डॉक्टरों की हड़ताल की हो या भ्रष्टाचार विरोधी बाबा रामदेव के आंदोलन की हो या फिर अण्णा हजारे के आंदोलन की। हम इस बात को नकार नहीं सकते कि सिनेमा में पाश्चात्य फिल्मों की नकल करके या कंप्यूटर एवं तकनीकी दखल से कई बातों को इतना बढ़ा–चढ़ाकर दिखाया जाता है जोकि यथार्थ से परे होती हैं। चूंकि सिनेमा में पैसे का कारोबार भी छिपा है। इसलिए मनोरंजन एवं नृत्य के नाम पर अश्लील दृश्य परोसे जाते हैं। जिनका समाज पर बुरा प्रभाव भी पड़ता है। लेकिन सिनेमा के कारण समाज में आए बदलावों एवं जागरूकता को देखते हुए यह प्रभाव नगण्य हैं।

विज्ञापन से सामाजिक सरोकार

विज्ञापन जो कि आज प्रचार का एक प्रमुख साधन बन गया है उसने भी समाज में आमूलचूल परिवर्तन लाने में काफी अहम भूमिका निभाई है। जहां पहले विज्ञापन हवाई सपने दिखाते थे आज वे समाज से जुड़े मुद्दे एवं सरोकार पर बन रहे हैं । विज्ञापन की भूमिका पर आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहूंगा। पहले सरकार न जाने कितने समय से पोलियो जैसी बीमारी को समाप्त करने के लिए कई योजनाएं चला चुकी है लेकिन कभी अपेक्षित सफलता नहीं मिली किंतु जब अमिताभ बच्चन का "दो बूंद जिंदगी की" वाला विज्ञापन आया तो इससे एक जबरदस्त बदलाव आया और पोलियो की खुराक पिलाने वालों की संख्या में काफी बढ़ोतरी हुई और पोलियो रोकथाम में इस विज्ञापन ने गजब का योगदान दिया। ठीक इसी प्रकार देश के कई राज्यों जैसे कि बिहार, मध्यप्रदेश, छतीसगढ़, झारखंड, राजस्थान कई वर्षों से शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ते जा रहे थे और साक्षरता की लौ सुदूर गांवों तक नहीं पहुंच पा रही थी ऐसे में जब "स्कूल चलें हम" अभियान शुरु किया गया और इसका विज्ञापन टीवी में दिखाया गया तो इसने देश में साक्षरता की लौ सुदूर गांवों तक जलाने में जो सहयोग दिया वह अपने आप में आश्चर्य जनक था। यह सच है कि कुछ विज्ञापन काफी यथार्थपरक एवं अश्लीलता को दिखाते हैं या युवाओं में मादक पदार्थों को परोक्ष रुप में बढ़ावा देते हैं। लेकिन उपभोक्ता वस्तुओं को बेचने एवं उनके प्रचार–प्रसार के लिए व्यावसायिकता जरुरी है। हालांकि सरकार बराबर निगरानी करती है। समय–समय पर आपत्तिजनक विज्ञापन हटाए भी गए हैं।

मीडिया एवं समाज का दायित्व

अब सवाल उठता है कि क्या सच में मीडिया समाज के लिए सबकुछ अच्छा ही कर रहा है, समाज पर केवल इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। अगर मैं कहूं कि इसके सिर्फ सकारात्मक प्रभाव ही हुए हैं तो यह पक्षपातपूर्ण और आधा सच ही होगा, क्योंकि किसी भी सिक्के के दो पहलू होते हैं और जब तक हम उसके दूसरे पहलू पर बात नहीं करेंगे तो बात अधूरी ही रहेगी। यह सच है कि हमारे खबरिया चैनलों ने देश में कई प्रकार की जागरुकता लाने में अहम भुमिका निभाई है लेकिन आज का मीडिया सूचनादाता कम और तयकर्ता की भुमिका में ज्यादा नजर आ रहा है । आज का मीडिया किसी भी समस्या का मूल ढूंढने की जगह उसका हल अपने तरीके से करता दिख रहा है। मीडिया जिसका काम लोकतंत्र के अन्य तीन स्तभों की सहायता करने का था, जिसके कारण 1975 के समय आपातकाल का दौर दिखाया गया था, आज वही टीआरपी की अंधी दौड़ में सभी सीमाओं को लांघता जा रहा है। आज वह खुद तय करने लगा है कि क्या सही है और क्या गलत। इधर समाज में दृश्य मीडिया के प्रति निर्भरता बढ़ गई है और इसपर ज्यादा विश्वास होने लगा है। ऐसे में मीडिया कई बार अपनी सीमाओं को भूल जाता है। जिस देश में सभी धर्मों के लोग शांति और भाईचारे के साथ मिलजुल कर रहते थे। वहीं आज मीडिया ने एक समुदाय के सभी लोगों को शक की निगाह से देखने पर मजबूर कर दिया है। सारा समाज भ्रमित है कि वह किसानों की आत्महत्या पर ध्यान दे, सरकार की योजनाओं के बारे में जाने या फिर राखी सावंत की नौटंकी देखे। यह सब मीडिया तय कर रहा है। लोग पहले दूरदर्शन में खेती से संबंधित कार्यक्रम देखते थे, कुछ चैनलों पर सैनिकों की जिंदगी पर कार्यक्रम दिखाया जाता था लेकिन आज चैनलों की संख्या तो बढ़ती जा रही है और अच्छे कार्यक्रमों की संख्या बदस्तूर घट रही है। कुछ साल पहले तक दो समुदायों के छोटे झगड़े होते थे, आपस में सुलझ जाते थे लेकिन मीडिया उसे दंगे के रुप में प्रस्तुत कर सनसनी पैदा कर देता है। जब महाराष्ट्र में एक स्थानीय राजनीतिक दल ने अपने मौजूदगी को दर्शाने के लिए एक वर्ग विशेष पर हमले किये तब भी मीडिया ने नकारात्मक पत्रकारिता कर उसके नेता को हीरो बना दिया और दूसरे वर्ग के लिए इसे अस्मिता का सवाल बना दिया। बुंदेलखंड के हालात पर पांच मिनट की न्यूज तो दिखायी जा रही है लेकिन मीडिया ने इसके लिए किसी प्रकार का अभियान नहीं चलाया, हां प्रिंस के गड्ढे में गिरने को जरुर लगातार कवरेज मिलता रहा और ऐसा माहौल बना दिया मानो प्रिंस का जिंदा निकलना ही देश की अस्मिता की बात है या फिर रामलीला मैदान से आंदोलन का चौबीसों घंटे लाइव कवरेज दिखाना। मानो इसके सिवा देश में और कोई घटना ही नहीं हुई। यहां न्यूज चैनलों का दिवालियापन साफ दिखता है। खबरिया चैनलों ने तो जो किया सो किया हमारा सिनेमा भी पीछे नहीं रहा जहां हिंसा, बलात्कार, अश्लीलता आदि को अधिक दिखाया गया। आज जिस प्रकार फिल्मों में कालेज में पढ़ने वाले या युवा लड़कों व लड़कियों के पहनावे और फूहड़ता को जगह दी जा रही है, उसने सभी सामाजिक वर्जनाओं को तोड़ दिया है। फिल्मों में कालेज शिक्षा संस्थान कम एवं प्रेम का अखाड़ा ज्यादा दिखते हैं। इसका सबसे अधिक खामियाजा हमारी औरतों को भुगतना पड़ रहा है। हाल ही में आए एक सर्वे में बताया गया है कि देश की पुलिस चाहे जितने दावे कर ले लेकिन सच्चाई यही है कि देश में दहेज प्रताड़ना, बलात्कार, यौन शोषण, और छेड़छाड़ की घटनाओं में बेतहाशा वृद्धि होती जा रही है। हमारे ग्रामीण क्षेत्र, जो कभी सुरक्षित और फूहड़ता से बचे हुए थे, आज वहां भी महिलाएं अपने को सुरक्षित नहीं पा रही हैं। आज अगर देश में आपसी भाईचारे की जगह द्वेष और घृणा ने ले ली है और महिलाओं को सम्मान की नजर से देखने वाला समाज उसे शिकारी नजरों से देख रहा है तो इसमें मीडिया अपनी जिम्मेदारी से नहीं बच सकता है और न ही इससे मुंह मोड़ सकता है।

इसलिए अब समय आ गया है कि मीडिया के समाज पर हो रहे प्रभाव का मूल्यांकन किया जाए और मीडिया अपनी जिम्मेदारी एवं सलाहकार की भूमिका होने का अहसास करे । वह स्वयं आत्मचिंतन करे।

सुविचार

"जिस देश में आधी स्त्रियाँ हों, अगर उस देश में मनुष्यता का आधा हिस्सा अपने को नीचा मानता हो और आधा हिस्सा अपने को ऊंचा मानता हो तो उस देश का विकास नहीं हो सकता। मगर बड़े मजे की बात है कि जिस देश में स्त्री अपने को नीचा मान ले, उस देश मे पुरुष कभी ऊँचा नहीं हो सकता, क्योंकि सब पुरुषों को स्त्री से ही जन्म लेना पड़ता है। और जिस मुल्क में माँ दीन हो उस मुल्क में बेटे बहुत गौरवशाली नहीं हो सकते। यह असंभव है। असल में स्त्री जब तक गौरवान्वित नहीं होती तब तक पुरुष कभी गौरवान्वित हो नहीं सकता, क्योंकि स्त्री से ही सभी पुरुषों को जन्म लेना पड़ता है।"

– 'ओशो'

यह कैसा विकास

– अशोक कुमार, क्षेत्रीय प्रबंधक

सरकार के द्वारा गरीबी की रेखा तो पहले ही निर्धारित थी जिस रेखा के नीचे रहने वाले लोगों के लिए सरकार कुछ विशेष राहत सुविधाएं उपलब्ध कराती थी। हालांकि, सरकार की मदद के बावजूद, व्यवस्था की खामियों के चलते और भ्रष्ट तंत्र के कारण यह मदद कागजों पर तो पहुंचती दिखाई पड़ती रही है, परन्तु धरातल पर वास्तविकता कुछ और है। हमारे देश के अस्सी प्रतिशत गरीबों को पूरी तरह से यह भी नहीं मालुम कि उनके कल्याण के लिए सरकार की कितनी कल्याण योजनाएं हैं। उन्हें यह जान पाना तो बहुत दूर की बात होती है कि इसमें केन्द्र सरकार की कौन सी योजना है और राज्य सरकार की कौन सी। तमाम कल्याण योजनाओं में करोड़ों अरबों रूपये खर्च करने के बावजूद सही मायनों में और स्थाई तरीके से गरीबों का भला नहीं हो पाया।

यह न सिर्फ केन्द्र सरकार की असफलता है, बल्कि राज्य सरकारें भी असफल रही है। सच तो यह है कि गरीबी को स्थाई तौर पर समाप्त करने के लिए विभिन्न सरकारों के द्वारा ठोस और औचित्यपूर्ण योजनाएं एवं परियोजनाएं क्रियान्वित नहीं की गई। गरीबी का सबसे बड़ा कारण देश के गरीब वर्ग एवं किसानों का खेती पर आश्रित होना है। यहां की अधिकतर खेती वर्षा एवं मानसून पर निर्भर है। यदि बरसात अच्छी होती है तो कृषि कार्य अधिक होता है और उपज भी बढ़ती है इससे सभी को काम और अनाज मिलता है लेकिन किसानों एवं मजदूरों के लिए यह केवल मौसमी काम होता है। पूरे साल में चार–पांच महीने काम और फिर खाली बैठना।

सरकारों की ओर से ग्रामीण इलाकों में कृषि आधारित उद्योग या अन्य कोई ऐसे उद्योग नहीं लगाए गए, जहां अनपढ़ एवं कौशल रहित लोगों को काम और रोजगार मिल पाये। भारत में गांवों में दो प्रकार के लोग रहते हैं। एक वे होते हैं जिनके पास भूमि होती है और कृषि कार्य से परिवार का पोषण करते हैं और दूसरे वे लोग होते हैं जो इन कृषकों एवं जमींनदारों के साथ बंटाई पर खेती या इनके खेतों में सपरिवार मजदूरी करते हैं। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि ये काम मौसमी होते हैं जो अब बढ़ती मंहगाई के दौर में एक परिवार के पोषण के लिए अपर्याप्त होते हैं।

इस सीमांत या बंटाईदार कृषक एवं मजदूर को केवल मंहगाई डायन ही नहीं खा रही, बल्कि कृषि कार्य के आधुनिकीकरण के चलते ट्रैक्टरों से खेती के कारण जहां बैल व हलवाहे समाप्त हुए, वहीं विभिन्न प्रकार की फसल कटाई (हार्वेस्टिंग) एवं बुवाई की मशीनों के कारण मजदूरों के लिए काम में तेजी से कमी आई। निराई–गुड़ाई के द्वारा खरपतवार निकालने की बजाए विभिन्न रसायनों के छिड़काव से खरपतवार नष्ट करने के कारण खेतों में काम की कमी आई। इन सबका परिणाम यह हुआ कि संपूर्ण देश का मजदूर वर्ग स्थानीय स्तर पर काम के अभाव के कारण शहरों एवं महानगरों की ओर पलायन कर रहा है। जिसका परिणाम जहां शहरों में तेजी से झुग्गी व स्लम बस्तियां बनी, वहीं शहरों व महानगरों में शहरी गरीब जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हुई।

भारत सरकार ने निरंतर बढ़ रही गरीब जनसंख्या एवं उसके निवारण के मूल कारणों को खोजने की बजाय अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत में गरीबों की जनसंख्या को कम दिखाने के लिए एक नई परिभाषा ही गठित कर दी। भारत सरकार के योजना आयोग के

मुताबिक शहर में लगभग 30/–रु. प्रति सदस्य और गांव में लगभग 20/–रु. प्रति सदस्य कमाने वाला परिवार गरीबी की श्रेणी में नहीं आता। सरकार के इस नए मानक पर पूरे देश में एक बहस छिड़ गई है कि क्या वास्तव में इस मापदंड के ऊपर वाले लोग गरीब नहीं है। यदि इसे मान लिया जाए तो फिर देश में कोई गरीब बचेगा ही नहीं। लेकिन सच तो यह है कि इस मानदंड के बावजूद भारत में अभी भी 40 करोड़ लोग गरीबी की इस नई रेखा से नीचे हैं। वैसे विशेषज्ञों एवं बुद्धिजीवी लोगों का मानना है कि देश में अभी भी 80 करोड़ लोग गरीब है जिन्हे तुरंत मदद की जरूरत है फिर चाहे वह मनरेगा के जरिए किया जाए या फिर खाद्य सुरक्षा बिल लाकर।

यह तो हुई गरीबी की बात, लोगों के स्वास्थ्य एवं शुचिता पर तो किसी का ध्यान ही नहीं गया, अधिकतर गांवों के ज्यादातर लोग अभी भी खुले में शौच जाते हैं। अभी 80 प्रतिशत परिवारों के पास शौचालय की सुविधा नहीं है। योजना आयोग ने माना है कि आधा भारत खुले में निपटता है। देश के लगभग 60 करोड़ लोगों के पास ऐसी कोई सुविधा नहीं है कि वे बेखटके शौच जा सकें, लघुशंका कर सकें या नहा–धो सकें। शहरों में रहने वाले बहुत से लोगों को इस आंकड़े पर भरोसा ही नहीं होगा। उन्हें तो अंदाजा ही नहीं है कि खुले में निपटना कितना शर्मनाक, कष्टप्रद और खतरनाक है। उन्हें इस परेशानी की छोटी–सी बानगी तब मिलती है, जब कभी वे रेल से यात्रा करते हैं। रेल की पटरियों के किनारे सुबह–सुबह निपटते हुए लोगों को देखकर किसे शर्म नहीं आती?

विदेशी रेल–यात्री तो कई बार अपने सह–यात्रियों से पूछते हैं कि ये लोग इस तरह उघड़े हुए क्यों बैठे हैं? वे सोच भी नहीं सकते कि जमीन पर उकडू बैठकर लोग (औरत भी) खुले में शौच करते हैं। आजादी के 64 साल बाद भी पूरे भारत को यह शर्म झेलनी पड़ रही है।

भारत के गांवों में 80 फीसदी से भी ज्यादा लोग आदमियों नहीं, जानवरों की तरह शौच जाते हैं। चाहे मूसलाधार बरसात हो रही हो, कड़ाके की ठंड पड रही हो या प्राणलेवा धूप चिलचिला रही हो, गांव के लोगों को अपने झोपड़ों से बाहर जाकर खुद को हल्का करना पड़ता है। मरीजों और अपंगों की दुर्दशा का अंदाजा तो हम लगा ही सकते हैं।

सबसे ज्यादा मुसीबत औरतों और बच्चों को होती है। यदि दिन में ही हाजत हो जाए तो औरतें कहां जाएं? वे सुबह पौ फटने के पहले या शाम को सूर्यास्त के बाद ही निपट सकती है। देश की करोड़ों औरतों की हालत तो पशुओं से भी बदतर है। गाय और भैंस तो कहीं भी और कभी भी पोटा कर सकती हैं, लेकिन औरतों को तो दिन भर तड़पते रहना पड़ता है। ये मजबूरी भी कैसी मजबूरी है? क्या हम अपने इस भारत को सभ्य राष्ट्र कह सकते हैं?

जो मर्द और औरतें खुले में निपटते हैं, वे तरह–तरह की बीमारियों के शिकार हो जाते हैं। दस्त और मियादी बुखार से हर साल मरने वाले लोगों की संख्या लगभग 7 लाख है। इनमें से ज्यादातर लोग वे हैं, जिन्हें बाहर गंदगी में निपटना पड़ता है। एक तरफ अपने देश में लोग अपने आधुनिक मकानों में एक–एक टायलेट पर लाखों–करोड़ों रुपए खर्च कर रहे हैं, दूसरी तरफ लाखों–करोड़ों लोगों को निपटने के लिए कोई सीधी–सादी, साफ–सुथरी जगह भी नसीब नहीं है। सरकार का वायदा था कि 2012 तक देश के हर व्यक्ति को शुद्ध पेयजल एवं स्वच्छ शौचालय उपलब्ध करवा दिया जाएगा। 64 साल में यह सुविधा सिर्फ 60 करोड़ लोगों ने अपने आप पैदा की है, तो शेष 60 करोड लोगों को क्या हमारी सरकारें अगले 60 साल में यह सुविधा उपलब्ध करवा पाएंगी?

सपनों का घर बना दु:स्वपन

– बी. प्रभु, सहायक प्रबंधक

छत पर लाल टाईलों की तिकोने आर्कवाली परछत्ती हो और एक बड़ा सा मकान जिसमें प्यारा सा आंगन, एक छोटा–सा झरोखा जिसके ठीक सामने बगीचा हो और बाग के चारों तरफ शक्वांकार पत्थर की पगडंडी बनी हो, इस तरह के एक प्यारे से घर का सपना सुश्री नायडू अपने स्कूल के दिनों से देखा करती थीं। उनका यह घर भले ही किसी महानगर में न हो, पर महानगर से दूर किसी कस्बे में तो हो ही सकता है। जब उनकी टीचर की नौकरी लगी और एक शिक्षक के साथ शादी के बाद ससुराल आई तो जल्द ही इस दिशा में कदम उठाया और अपने सपनों को साकार करने की ठानी। मार्टगेज लोन के आधार पर 12 लाख का ऋण लेकर एक घर बुक करा दिया।

लेकिन जब पांच अंको में जुटाई गई आय की तुलना में उनकी बैंक को दी जाने वाली आसान मासिक किस्त (ईएमआई) लगातार बढ़ने लगी। तब से यह सपना चकनाचूर सा हो गया है। अब ऐसा लगता है कि क्या वो अपने सपनों के घर का सपना फिर से देख पाएंगी?

इस दौरान उनके जीवनयापन के दूसरे खर्चों पर भी मार पड़ने लगी। यानि दो बच्चों की मंहगी शिक्षा एवं बढ़ती मंहगाई में खान–पान के बढ़ते खर्च की वजह से मकान हेतु बैंक से लिए गए 12 लाख के ऋण की मासिक किस्तों को चुकाना मुश्किल हो गया। उनके लिए भी उनका आवास ऋण दूसरे लाखों भारतीय निम्न मध्य वित्त वर्ग की तरह गले की हड्डी बन गया, जो बैंक की बैलेंस शीट में अनुपयोज्य आस्ति बनकर रह गया है। जिस तरह से भवन निर्माताओं ने उनको किफायती आवास के सपने दिखाये थे वह एक तरह से बैंकों, ग्राहकों, उद्योगों और सरकार के लिए प्रसन्नता की स्थिति थी।

वैश्विक आर्थिक संकट और फिर पूरे विश्व में आई आर्थिक मंदी ने मुद्रास्फीति के रूप में अर्थव्यवस्था को जोर का झटका दिया। कुछ समय पहले तक ऐसा लगता था कि सीमेंट, स्टील, पेंट, विद्युत और सैनिटरी वेयर उद्योग के लिए आवास बिल्डरों की मांग कभी खत्म नहीं होगी। लेकिन तेजी से बढ़ती मंहगाई के कारण जैसे–जैसे ब्याज दर नियंत्रण से बाहर होने लगी, वैसे ही बैंक के पास बकाया तथा अनुपयोज्य आस्तियां बढ़ती गयीं।

2003–04 से 2007–08 के चार वर्षों के दौरान बैंकों द्वारा आवास ऋण संवितरण 35–40 प्रतिशत तक बढ़ गया। 2004–05 में यह दुगुने से अधिक हो गया था। लेकिन जैसे ही अर्थव्यवस्था पर मंहगाई और मुद्रास्फीति का प्रभाव पड़ा वर्ष 2008–09 में आवास ऋणों की मांग गिरकर आधी रह गई। आरबीआई की सांख्यिकी दर्शाती है कि यह वह अवधि थी, जिसमें आवासीय आस्ति आवास ऋणों के प्रतिशत के रूप में बढ़ने लगी।

बैंकों द्वारा भू–संपदा पर तेजी से दिए जा रहे ऋणों पर शिकंजा कसने के लिए आरबीआई ने अपनी विनियमावली को मजबूत किया और यह विश्वास दिलाया है कि अब बैंक 20 लाख से अधिक परिसंपत्ति पर 80 प्रतिशत और 20 लाख से कम पर 90 प्रतिशत से ज्यादा ऋण नहीं देंगे। शीर्षस्थ बैंक ने भी बिल्डरों के लिए ऋणों को 0.4 से बढ़ाकर नवम्बर 2010 में दो प्रतिशत तक करके मानकों का प्रावधानीकरण किया।

कुछ समय के बाद आवास ऋणों की वृद्धि लम्बे समय बाद

एक अंकीय स्तर पर आई जब आवासीय अनुपयोज्य आस्ति के प्रतिशत संयत हुए थे, हालांकि वे उच्च ही बने रहे। यद्यपि तभी से ऋणों की वृद्धि में कमी आ गई है। बैंकों के खुशहाली भरे दिन अब खत्म होते दिख रहे थे। जब बैंकों की बैलेस शीटें लाल धब्बों में भरने लगीं तो सैंकड़ों लोगों के लिए घर का सपना छिन्न–भिन्न होने लगा, लेकिन आरबीआई द्वारा शिकंजा कसे जाने पर आवास ऋण संवितरण की गिरावट फिर से ठीक होने लगी।

यदि आरबीआई ने समय पर शिकंजा न कसा होता तो आवासीय क्षेत्र में संभावित बकाया और अनुपयोज्य आस्ति बहुत ज्यादा ऊँचे होते। भारी जेबों वाले एवं जोखिम उठाने वाले ग्राहक ही आवास ऋण बाजार में दिलचस्पी ले रहे होते। लेकिन पिछले समय के हजारों आवास ऋण ग्राहक अपने ऋण चुकाने में असमर्थ रहे।

आवास बाजार की मंदी का प्रभाव सभी क्षेत्रों में दिखने लगा। अधिकतर बड़े उद्योग जैस स्टील, सीमेंट, विद्युत उपकरण, सैनिटरी वेयर और पेंट कंपनिया लाभ घटने के साथ नीचे को औंधे मुंह जाने लगी। ऋणों को लेने वालों की कमी, ऊँचे ब्याज और घटते लाभ की वजह से बैंकिंग क्षेत्रों की हालत भी बिगड़ने लगी। यह समय शेयर बाजार के लिए भी खराब चल रहा था।

श्रीमती नायडू का मामला लें, कुछ समय पहले वे स्वयं को बहुत सौभाग्यशाली मान रही थीं, क्योंकि तब 7.5 की प्रतिवर्ष निम्नतम ब्याज दर पर आवास ऋण मिलने से, वे अपने सपनों का घर बना पाने में खुद को सक्षम मान रही थीं। तब उनके 12 लाख रू. के आवास ऋण पर 25 साल की अवधि के लिए मात्र 8,868 प्रतिमाह की किश्त थी। लेकिन भाग्य ने ज्यादा साथ नहीं दिया। उनके बैंक ने उनका खाता अस्थिर दर श्रेणी में डाल दिया। तब उन्हें भी लग रहा था कि शायद ब्याज दर और नीचे जा सकती है। वैसे भी स्थिर दर के ऋण पर ब्याज एक प्रतिशत अधिक था। आज अपने आवास ऋण पर वो 11.5 प्रतिशत की ब्याज दर का भुगतान कर रही हैं। तीन साल की अवधि में 12,198 रू. की राशि पर तेजी से बढ़ी ब्याज दर 35 प्रतिशत से अधिक तक जा पहुंची। जो अभी तक उनकी समझ से परे है।

मुद्रास्फीति की ईएमआई के ऊँचे दामों ने न सिर्फ ग्राहक को दुखी किया है बल्कि सरकार भी दुखी है। भारत में सकल घरेलू उत्पाद का बहुत कम भाग आवास, क्षेत्रों की तरफ से प्राप्त होता है। वर्ष 2001 में सकल घरेलू उत्पाद का यह केवल 3.4 प्रतिशत था, 2006 में 6.1 और 2007 में 7 प्रतिशत था। जबकि इसी दौरान मॉर्टगेज बाजार में सकल घरेलू उत्पाद चीन में 12

प्रतिशत, मलेशिया में 22 प्रतिशत और यूएस में 40 तथा 65 प्रतिशत आंका गया।

श्रीमती नायडू बेशक निराश हो गई हों, लेकिन उन्होंने हार नहीं मानी। उनके ऋण अनुपयोज्य आस्ति में न बदल जाएं, इसके लिए वो लगातार संघर्ष कर रही हैं। सरकार की चतुराई और समय रहते हस्तक्षेप से शायद वे सपनों के घर का स्वपन फिर से जी सकें। हालांकि यह अलग बात है कि जिस दौरान उन्होंने अपना घर 20 लाख में बुक किया था, अब वही 40 लाख रू. का हो गया है। जिसके लिए अतिरिक्त राशि जुटानी पड़ रही है या फिर भवन निर्माता उनके मकान का आकार तीन की बजाय दो कमरों का कर रहा है। श्रीमती नायडू की भांति न जाने कितने उपभोक्ता परेशान हैं क्योंकि मकान बुक करते समय उन्होंने पूरी शर्तों एवं नियमों की बारीक लाइनों को ठीक से नहीं पढ़ा था। उस समय उन्होंने भू–संपति एजेंट की चिकनी चुपड़ी बातों एवं लुभावने वादों पर फिदा होकर हस्ताक्षर कर दिए थे।

हिंदी
बनाम राजभाषा

– धीरज कुमार, सहायक प्रबंधक

आज यह बड़ी ही चिंता एवं शोध का विषय है कि जो हिंदी भारत भर में लगभग 75 प्रतिशत लोगों द्वारा बोली व समझी जाती है। लोग उसे रोजमर्रा के जीवन में इस्तेमाल करते हैं। यह एक सजीव व रोचक जन–जन की भाषा है, लेकिन यही भाषा जब सरकारी काम–काज की भाषा बन जाती है तो आम जनता के लिए दूरूह एवं असहज बन जाती है। ऐसी सरकारी भाषा से न सिर्फ आम कर्मचारी व अधिकारी वर्ग दूर भागता है, बल्कि जनता भी दूर भागती है। इसका स्पष्ट कारण होते हुए भी लोग उसे समझना या मानना नहीं चाहते। लेकिन सच तो यह है कि सरकारी भाषा अंग्रेजी से अनूदित भाषा होती है। यदि यही भाषा प्राकृतिक रूप से इस्तेमाल की जाती यानि कि पहले हिंदी में मूल ड्राफ्ट तैयार होते एवं उनका अंग्रेजी में अनुवाद होता तब हिंदी सहज सरल व सुबोध होती व अंग्रेजी दुरूह व दुष्कर व जटिल होती। परंतु भारत के सरकारी तंत्र में इसका उलट है। इसलिए हिंदी जनप्रिय व लोकप्रिय होने के बावजूद सरकार की भाषा के रूप में सरल, सहज व सुगम न बन सकी।

अब सवाल यह उठता है कि– किसी भाषा की जीवंतता की आखिर क्या कसौटी है? इस प्रश्न को पलट कर ऐसे भी पूछा जा सकता है कि क्या कोई ऐसी भाषा जिंदा रह सकती है, जो किसी जन समुदाय की रोजमर्रा की जिंदगी में संवाद का माध्यम न हो? अगर भाषा ऐसी हो जाए, जो किताबों में बंद रहे या उसमें सिर्फ लिखित दफ्तरी संवाद होता हो, तो क्या उसे जनभाषा कहा जाएगा? इन सवालों का हिंदी से गहरा नाता है।

आज हमारे सामने दो तरह की हिंदी है। एक जो हम लोग बोलते हैं। वह हिंदी जो अपनी संप्रेषण क्षमता के कारण कमोबेश भारत के हर हिस्से में पहुंची हुई है और संपर्क भाषा का काम कर रही है। वह हिंदी जिसमें हमारी लोकप्रिय संस्कृति बोलती है। जो हम हिंदी फिल्मों के संवाद एवं गानों में सुनते और गुनगुनाते हैं। जिसके जरिए हमारी मुख्यधारा का हिंदी मीडिया करोड़ों लोगों से बात कर रहा है, उन्हें सियासत, अर्थव्यवस्था, खेल और देश–दुनिया की अन्य खबरें एवं विचार दे रहा है। यह इस हिंदी की सुगम्यता ही है कि उसे करोड़ों लोग स्वीकार कर रहे हैं। इसलिए कि उन लोगों के लिए समस्या हिंदी की कथित शुद्धता एवं उसके मौलिक रूप की रक्षा नहीं, बल्कि इस भाषा के जरिए दुनिया के आधुनिक ज्ञान एवं मनोरंजन तक पहुंचना है। आज यह भाषा पाकिस्तान बांग्लादेश व नेपाल ही नहीं बल्कि अरब देशों तथा सात समन्दर पार अनेक देशों में देखी, सुनी व समझी जा रही है।

एक दूसरी हिंदी भी है, जो सरकारी पत्राचार और फाइलों में देखने को मिलती है। उसकी वाक्य रचना और उसमें इस्तेमाल हुए शब्दों को समझना एक पढ़े–लिखे व्यक्ति के लिए भी कठिन चुनौती है। आपको अक्सर यह महसूस होगा कि इस यांत्रिक अनुवाद और कृत्रिम शब्दों से तैयार दस्तावेजों में माथा खपाने से बेहतर तो यही होगा कि हम उसका मूल अंग्रेजी पाठ पढ़ लें। आखिर इन दोनों तरह की हिंदी में क्या फर्क है? यही कि एक स्वाभाविक भाषा है, जिसमें उन्हीं शब्दों का इस्तेमाल होता है, जो लोग बोलते और समझते हैं। डॉक्टर की जगह चिकित्सक या कंप्यूटर की जगह संगणक का अस्तित्व वहां नहीं है। जबकि दूसरी वाली हिंदी ऐसे ही शब्दों और अंग्रेजी की वाक्य रचना के रूप में ही अनूदित हिंदी में ढली है। इन दोनों तरह की हिंदी में ऐसा फासला बन गया है कि बीच में अंग्रेजी बेहतर लगने लगती है?

तो क्या इस दीवार को तोड़ने की कोशिश कोई ईशनिंदा जैसी बात है, जिससे इसके पीछे हमें शुरुआत में ही डंडा लेकर पड़ जाना चाहिए? यह सवाल आज हिंदीभाषी समुदाय के सामने इसलिए उपस्थित हुआ है, क्योंकि केन्द्र सरकार के राजभाषा मंत्रालय ने एक प्रयास किया है। कुछ समय पहले इस मंत्रालय की तरफ से सरकारी विभागों को भेजे गए एक परिपत्र में कहा गया कि वे अपने हिंदी दस्तावेजों में उर्दू, अंग्रेजी, अरबी या तुर्की मूल के उन शब्दों का उपयोग करें, जो लोकप्रिय हैं। सरकारी हिंदी के अनूदित रूप से जुड़ी समस्या को स्वीकार करते हुए अनुवाद की प्रक्रिया को बदलने की जरूरत बताई गई और कहा गया कि अनूदित पाठ में शब्द–दर–शब्द अनुवाद के बजाय मूल पाठ की भावाभिव्यक्ति हो, इसका ख्याल रखा जाना चाहिए।

हालांकि, यह मुद्दा आज राजनीति में गौण हो चुका है, लेकिन महात्मा गांधी और राम मनोहर लोहिया के युग में 'चले देश में देसी भाषा' एक जीवंत नारा था। अगर आज की पृष्ठभूमि में हम इस सवाल पर विचार करें, तो आखिर कौन सी हिंदी को हम 'देशी भाषा' कहेंगे? उसे जिसे आम जन सहजता से समझ लेते हैं, या उसे जिसे समझना टेढ़ी खीर है? भारतीय लोकतंत्र अब छह दशक पुराना हो चुका है। मगर हकीकत यह है कि लोकतांत्रिक ढंग से चुनी गई अपनी सरकारें देशी भाषा के नाम पर जिस भाषा में संवाद करती है, वह लोक की भाषा नहीं है। सूचना का अधिकार कानून का बनना हाल में लोकतांत्रिक सशक्तीकरण की दिशा में सबसे अहम कदमों में से एक है। मगर इस कानून के तहत मांगी गई जो सूचना आपको हिंदी में मिलती है, उसे समझना भी दुरूह बना रहता है। वस्तुतः ऐसे पत्र का मूल पाठ अंग्रेजी में बनता है और अनूदित करके हिंदी में तैयार किया जाता है।

इस संदर्भ में राजभाषा मंत्रालय की ताजा पहल ने एक उम्मीद जगाई है। कम से कम इससे यह संदेश तो मिला है कि सरकार के अंदर भी इस समस्या को अब समझा जा रहा है। एक परिपत्र से कितना फर्क पड़ेगा कहना कठिन है। लेकिन इससे सरकारी हिंदी कैसी होनी चाहिए, इस पर बहस खड़ा करने और जनता की हिंदी को सरकारी कामकाज की हिंदी बनाने के पक्ष में दबाव बनाने का अवसर जरूर सामने आया है। इस अवसर को कट्टर शुद्धतावादी आग्रहों से गंवाया नहीं जाना चाहिए। भाषा के सहज विकास एवं विभिन्न भाषाओं के बीच आदान–प्रदान की स्वाभाविक परिघटना के प्रति आज सकारात्मक रूख अपनाने की जरूरत है। विभिन्न समाजों एवं संस्कृतियों के बीच अंतर्संबंध, विज्ञान एवं तकनीक की प्रगति से सामने आने वाली नई चीजों एवं उन्हें समझने के लिए बनने वाले नए शब्दों और नई परिस्थितियों के मुताबिक भाषा की शाखाएं विकसित होना किसी भी जीवंत भाषा के विकासक्रम से जुड़ी अनिवार्य परिघटनाएं हैं। हिंदी या कोई भी अन्य भाषा विकासक्रम से संबंधित इन पहलुओं को सिर्फ अपने नुकसान की कीमत पर ही अस्वीकार कर सकती है।

हमारे सामने अंग्रेजी का उदाहरण है। यह तथ्य है कि यह भाषा दुनिया भर में इसलिए फैली, क्योंकि वह ब्रिटिश उपनिवेशवाद की भाषा थी। उसी उपनिवेशवाद से जन्मे अमेरिका के आर्थिक वर्चस्व ने ब्रिटिश गुलामी का दौर खत्म होने के बाद भी अंग्रेजी का दबदबा कायम रखा। लेकिन अंग्रेजी की एक ताकत यह भी है कि उसने अपना दरवाजा खुला रखा है। हर साल हम बड़ी प्रसन्नता से यह चर्चा करते हैं कि ऑक्सफोर्ड की अंग्रेजी डिक्शनरी में कितने हिंदी के या भारतीय शब्द शामिल हो गए हैं। यही खुलापन हिंदी आखिर क्यों नहीं अपना सकती? दरअसल, आज की दुनिया में, जब संचार के साधनों ने पूरी दुनिया में रियल टाइम संवाद को संभव बना दिया है, किसी भाषा के लिए अंतर्मुखी होना वांछित विकल्प नहीं है और फिर हिंदी में ऐसे शब्द लिए जाएं, यह कोई ऐसी बात नहीं है, जो हिंदी के लिए अनोखी हो। आखिर हमारे व्याकरण में तत्सम एवं तद्भव के साथ–साथ देशज एवं विदेशज शब्दों का भी प्रावधान है। डॉ. लोहिया एवं हिंदी के अनेक सेवकों ने हमेशा ही इस बात पर जोर दिया कि हिंदी को बोलियों की तरफ ले जाया जाए। वहां से शब्द लिए जाएं। वहां से बोलना सीखा जाए। सरकार ने वह बात नहीं सीखी। (लेकिन हिंदी फिल्मों के संवाद लेखकों और लोकप्रिय संस्कृति से जुड़े अन्य समूहों ने इसके सफल प्रयोग किए।) अगर हिंदी को समय के साथ विकसित होना और जन भाषा बने रहना है, तो उसके सामने आज भी सिर्फ यही विकल्प है।

इसलिए राजभाषा मंत्रालय की कोशिशों की पर्याप्तता को लेकर जरूर संदेह का भाव रखना चाहिए। मगर हर कोशिश के पीछे साजिश ढूंढना कहीं अपने भीतर बैठी किसी कमजोरी की झलक है। सौभाग्य की बात यह है कि हिंदी के हित–चिंतक जितने कमजोर हैं, उतनी हमारी हिंदी नहीं है। न ही हिंदी बोलने वाला समुदाय अपनी भाषा को लेकर वैसी आशंकाओं में रहता है। इस क्षेत्र में थोड़ी सकारात्मक पहल हिंदी भाषी राज्यों को करनी होगी। (वे केन्द्र एवं अन्य सरकारों के साथ–साथ सभी से पत्राचार हिंदी में करें।) अभी भी उ.प्र., बिहार तथा कई राज्यों में कानूनी भाषा की लिपि तो हिंदी है पर मूलपाठ में उर्दू एवं अरबी शब्दों की भरमार होती है, उसे भी हिंदीमय करने की जरूरत है। इस हिंदी में अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों के प्रयोग को भी बढ़ावा दिया जाना चाहिए ताकि उन्हें भी लगें कि हिंदी उनकी अपनी और पूरे देश की भाषा है।

'उफ'

– जी.एन. सोमदेवे, सहा. महाप्रबंधक

भारत सरकार के तत्कालिन डाकतार विभाग में सन् 1978–79 में पटना के शासकीय क्षेत्रीय दूरसंचार कॉलेज कंकडबाग से माइक्रोवेव दूरसंचार प्रणाली में प्रशिक्षण पूर्ण करने के पश्चात मेरी पदस्थापना सतपुड़ा पर्वत श्रृंखला की महारानी पंचमढ़ी नामक मध्यप्रदेश के एक शीतल पर्यटन स्थल पर स्थित टेलीफोन एक्सचेंज में दूरसंचार केन्द्र प्रभारी के रूप में हुई। यह एक्सचेंज तब भारतीय सेना के लिए भी सेवाएं देता था। मैं वहां रखरखाव के अलावा राजस्व वसूली संबंधी कार्य भी देखता था। जैसे कि अधिकतर स्थानों पर पहले टेलीफोन एक्सचेंज एवं पोस्ट ऑफिस या तो एक ही भवन में या पास–पास होते थें। पंचमढ़ी में भी यही स्थिति थी। वहां डाक से मुझे रोज एक पत्र मिलता, कभी पोस्ट कार्ड तो कभी अंतरदेशीय। पत्र की भाषा तो हिंदी होती थी लेकिन क्या लिखा है यह समझ नहीं आता था। ऐसा प्रतीत होता था कि कोई शिकायत भरे लहजे में कुछ कहना चाहता है। मैंने अधीनस्थ स्टाफ से कई बार पूछा किंतु कुछ भी स्पष्ट रूप से पता नहीं चला। पंचमढ़ी का टेलीफोन एक्सचेंज बड़ी ही खूबसूरत जगह पर था। वहां के गेस्ट हाउस में जो जड़ी बूटियों का गार्डन था, मुझे बताया गया कि उसमें डॉ. राजेन्द्र प्रसाद (पूर्व राष्ट्रपति) जी अक्सर सैर करने आते थें। अपने स्वास्थ्य की वजह से उनका बारबार पंचमढ़ी आना जाना रहता था। सामने मध्यप्रदेश पर्यटन निगम का स्केटिंग हॉल, विशाल केफेटेरिया तथा राज्य सरकार के हनीमून हटों की श्रृखंला। वातावरण बड़ा ही मनमोहक था, वहीं बरगद के एक विशाल पेड़ के नीचे एक पागलनुमा व्यक्ति का डेरा था जिसकी उम्र लगभग कोई 65–70 वर्ष थी। लेकिन दिखने में वह हृष्ठ–पुष्ठ, तंदुरूस्त एवं कदकाठी से बड़ा आकर्षित था। टेलीफोन एक्सचेंज में बरसों से प्रतिदिन प्राप्त हो रहे पत्र की कहानी उसी व्यक्ति से जुड़ी थी। वह व्यक्ति किसी से बात नही करता था। लोग उसे हरिओम नाम से पुकारते मगर वह हमेशा निरंतर (जब तक सो न जाता) दो–तीन मिनट बाद बड़ी जोर से 'उफ' का उच्चारण करता। हर प्रश्न का जवाब सिर्फ 'उफ' और बस 'उफ' होता। सभी उसे 'हफ' के नाम से चिढ़ाते। उन्हें समझ न आता की हरीओम 'उफ' कह रहे हैं नाकि 'हफ'। हरिओम के उफ को भी किसी ने नहीं जाना। पंचमढ़ी में सेना की वजह से टेलीफोन एक्सचेंज की सिस्टम प्रणाली, खंभों की पोजीशन, तारों की कसावट, इंसुलेशन, केबल पोजीशन आदि उत्तम प्रकार की थी। मुझे पता चला कि हरीओम पहले पंचमढ़ी टेलीफोन एक्सचेंज में वरिष्ठ टेलीग्राफ लाइन मैन के पद पर कार्यरत था, बड़ा मेहनती और सेवा भाव से परिपूर्ण। उसी के समय वहां केबल बिछा था तथा खंबों को सुगमता से पहाड़ी क्षेत्र में लगाया गया था। एक दूरसंचार इंजीनियरिंग सुपरवाइजर (इएसटी) ने अपनी गलती हरिओम पर थोपकर उसे नौकरी से जबरन रिटायर कर दिया था। इस बात से वह काफी क्षुब्ध था। उसने कई बड़े अधिकारियों से मदद की गुहार लगाई परंतु कोई बात नहीं बनी। तब से हरिओम ने वाणी को विराम दिया, परिवार को छोड़–छाड़कर, टेलिफोन एक्सचेंज के सामने ही बरगद के पेड़ के नीचे डेरा डाल दिया। पोस्ट ऑफिस से पेंशन लेता और पेट भरता फिर सारा दिन एक ही शब्द 'उफ–उफ' कहता रहता। शायद वह यही कहना चाहता हो 'उफ ये जिंदगी' या 'उफ इएसटी' या 'उफ सरकार' या फिर 'उफ न्याय के देवता'। परंतु सच तो यही है कि हरिओम की पीड़ा हरिओम ही जाने। काश वह 60 वर्ष से कम उम्र का होता तो मैं जरूर उसकी मदद करता। आज भी न जाने ऐसे कितने हरिओम 'उफ–उफ' करते घूम रहे हैं हमारे देश में। लेकिन मुझे आज भी उस हरिओम के 'उफ' की याद आती है। मेरी उसके 'उफ' के प्रति आज भी गहरी संवदेना है। मुझे पता है हरिओम अब इस दुनिया में नहीं है; लेकिन उस बरगद के पेड़ के नीचें गूंज रही 'उफ' की ध्वनि हरिओम के होने का आभास मुझे आज भी करा देती है। हरिओम को न्याय नहीं मिला परंतु उसकी आत्मा को शांति मिले यही मेरी ईश्वर से प्रार्थना है।

औरत की स्थिति में सुधार का प्रस्ताव

–राधिका मूना, उप प्रबंधक

आए दिन हम टीवी पर सास–बहू के सीरयलों में देखते हैं कि किस प्रकार से सास अपनी बहू को या फिर बहू अपनी सास को प्रताड़ित करती है। यद्यपि इन टीवी के सीरियलों में असलियत को बहुत बढ़ा चढ़ाकर बताया जाता है, तथापि इनमें काफी सच्चाई भी होती है। ऐसा प्रायः तब होता है जब स्त्री के पास संपत्ति संबंधी कानूनी अधिकार नहीं होता और वह पति या सास की दया पर निर्भर होती है यह स्थिति कमोबेश पूरे देश की है। सदियों से चली आ रही इन दकियानूसी परंपराओं को बदलने की आवश्यकता है जिसे सुदृढ़ आत्मबल से बदला जा सकता है और देश की 50 प्रतिशत आबादी को प्रत्यक्ष लाभ पहुंचाया जा सकता है।

हाल ही में योजना आयोग ने एक ऐसा प्रस्ताव रखा है, यदि उसे सरकार ने मान लिया तो भारतीय समाज में न सिर्फ स्त्री की सामाजिक–आर्थिक हैसियत बढ़ेगी, बल्कि वह पति–पत्नी के रिश्ते में आमूल परिवर्तन भी ला सकती है।

योजना आयोग का वीमेंस एजेंसी एंड एमपॉवरमेंट नामक वर्किंग ग्रुप संपत्ति का अधिकार संबंधी एक ऐसा समग्र कानून चाहता है, जिसमें पति–पत्नी के बीच अलगाव होने या परित्याग की सूरत में दोनों के बीच कुल संपत्ति का बंटवारा बराबर–बराबर हो।

एक ऐसा कानून हो, जिसके तहत पति और पत्नी की जो भी संपत्ति है, चाहे वह चल हो या अचल, उस पर दोनों का समान अधिकार हो। वह जायदाद साझा जायदाद हो। इस कानून के दायरे में सिर्फ वैवाहिक जोड़े ही नहीं होंगे, बल्कि लिव–इन रिलेशनशिप भी इसमें शामिल रहेगा और यह सभी समुदायों पर लागू होगा। इस पैनल के मुताबिक पारिवारिक कानूनों की समीक्षा होनी चाहिए और कानून में स्त्री को भी पति के समान भागीदारी वाली पहचान मिलनी चाहिए।

दरअसल, ऐसे कानून की आवश्यकता लंबे समय से महसूस की जा रही है। अगर योजना आयोग के प्रस्ताव पर अमल हुआ और कानून बन गया तो औरतों का कितना लाभ होगा, बहस का एक पहलू यह भी है। विवाह नामक संस्था की एक कड़वी हकीकत यह है कि विवाह के बाद पति और पत्नी कहने को बराबर के भागीदार हैं, मगर सच यह है कि दोनों की आर्थिक हैसियत एक सी नहीं होती, आर्थिक विषमता बनी रहती है और यह विषमता औरत के सामाजिक दर्जे पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

हिंदु विवाह कानून 1955 में लागू हुआ और 2003 तक इसमें कई संशोधन भी किए जा चुके हैं। पितृसत्तामक/पुरुष प्रधान सामाजिक व्यवस्था विवाह नामक संस्था में पत्नी को पति के बराबर आर्थिक अधिकार देने से रोकती है। औरतों के प्रति ऐसी सामाजिक जड़ता की कीमत उन्हें ही सबसे अधिक चुकानी पड़ती है। दहेज के नाम पर औरतों से उनका संपत्ति में से अधिकार छीन लिया गया। यह एक तरह की स्त्री विरोधी साजिश ही है। अंग्रेजी शासन के दौरान भूमि बंदोबस्त अभियान व संपत्ति संबंधी कानूनों में बहुत से स्त्री विरोधी फेरबदल किए गए।

लेकिन यहां पर यह भी ध्यान देने की जरूरत है कि यह सब जितना सरल दिखता है, उतना है नहीं। सच तो यह है कि ऐसे कानूनों का क्रियान्वयन बहुत ही मुश्किल है और नतीजे में पारिवारिक कलह बहुत ज्यादा बढ़ेंगे। मान लीजिए किसी कारणवश पति–पत्नी के बीच तलाक होता है, तो भी क्या संपत्ति का आधा–आधा बंटवारा होगा। यदि बंटवारा हो भी गया तो बच्चों की कस्टडी कौन लेगा। यदि तलाकशुदा स्त्री अपना पुनर्विवाह करती है तब वह संपत्ति किसे मिलेगी। पहले पति के बच्चे को क्या हिस्सा मिलेगा और दूसरे पति के साथ वह कहां रहेगी और उस पति से पैदा हुई संतान का संपत्ति पर क्या अधिकार होगा। यह तो एक उदाहरण मात्र है। भारतीय समाज में ऐसी न जाने कितनी विसंगतियां उठ खड़ी हो सकती हैं। इन सभी मुद्दों पर बहस छोड़कर समाधान खोजने की जरूरत है, ताकि औरत का हक फिर किसी कानूनी दांव–पेच में न अटक कर रह जाए या वह जीवन भर कोर्ट–कचहरी का चक्कर लगाते–लगाते अपनी जवानी गंवा दे, तलाक के बाद

उसका अपना घर बसाने का सपना भी न पूरा हो सके। एक औरत को वे सभी हक व अधिकार एक समान और बराबर मिलने चाहिए जो एक पुरूष को मिलते हैं।

प्रमुख बदलाव मातृवंशी परिवारों को पितृवंशी संपत्ति वितरण प्रणाली की ओर धकेलना और पंरपरागत सामूहिक पारिवारिक संपत्ति को निजी संपत्ति में बदल दिया जाना था। दहेज और प्रति 1000 बालकों पर 914 बालिकाओं का आंकड़ा समाज में उनकी कमजोर स्थिति को दर्शाता है। महिलाओं के नाम पर कितनी कम संपत्ति होती है, यह तथ्य जगजाहिर है।

योजना आयोग के विशेषज्ञों का भी मानना है कि औरत को मालिकाना हक देने से इंकार करना भी देश में महिलाओं के हीन दर्जे का एक प्रमुख कारण है। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना का एक फोकस महिलाओं को मालिकाना हक दिलाने के लिए प्रोत्साहित करना भी था।

बेशक देश के विभिन्न राज्यों में औरत के नाम पर मकान खरीदते वक्त स्टैंप ड्यूटी में कुछ रियायत देने वाला प्रावधान भी है, मगर यहां सवाल सारी वैवाहिक संपत्ति में पत्नी को पति के समान अधिकार दिलाने का है। यह अधिकार दो पहिए वाले वाहन में भी बराबर का होगा तो कार में भी। हर वो संपत्ति जो विवाह के बाद खरीदी गई है, वह साझा संपत्ति के नाम से वर्गीकृत होगी।

ऐसे अधिकार की मांग ने वर्ष 2004 के आसपास जोर पकड़ा, जब संपत्ति में महिला अधिकारों को इस नजरिए से समझने की कोशिश की गई कि औरत की सामाजिक– आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए वैवाहिक संपत्ति में समानता के सिद्धांत को कानून के जरिए लागू करवाना एक असरदार औजार साबित होगा।

यूपीए सरकार की अध्यक्षा ने 17 मार्च 2011 को लंदन में आयोजित 'वीमेन इज एजेंट ऑफ चेंज' नामक विषय पर बोलते हुए देश के महिला आंदोलन के योगदान की तारीफ की थी। उन्होंने कहा कि देश के महिला आंदोलन ने दहेज, महिला हिंसा, घरेलू श्रम व संपत्ति अधिकारों में भेदभाव करने वाले रिवाजों के खिलाफ अभियान चलाया और इन्हीं अभियानों की बदौलत कई सुधारवादी कानून बने। योजना आयोग का नया प्रस्ताव भी आमूल–चूल परिवर्तन की ओर इशारा कर रहा है। इसका काफी प्रभाव पड़ेगा।

यहां पर एक बात यह भी विचारणीय है कि क्या सरकार और राज्य सरकारों के पास इतनी बड़ी एवं प्रबल इच्छा शक्ति है कि वह एक आमूल–चूल परिवर्तन कर सकें और केन्द्र सरकार के पास ऐसे सहयोगी दल हैं जो सरकार के इस रेडिकल बदलाव का समर्थन कर इसे संसद से कानूनी स्वरूप दिला सकें। क्या राज्य सरकारें, विशेष रूप से क्षेत्रीय दलों की सरकारें ऐसे क्रांतिकारी बदलाव का समर्थन करेंगी। अभी हाल ही में जिस प्रकार से एक आतंक विरोधी कानून के विरोध में सुर उठे, उसे देखते हुए यह आशा बहुत ही कम की जाती है कि केन्द्र सरकार में शामिल सभी दल और राज्य सरकारें उदार मन से ऐसे किसी कानून का स्वागत करेंगी। हालांकि सभी पढ़े–लिखे नागरिकों को ऐसे किसी भी कानून का समर्थन करना चाहिए ताकि समाज में नारी की स्थिति में सुधार हो और विषमता घटे। इस कानूनी सुधार में वे सभी बातें समाहित की जानी चाहिए, जो सभी पक्षों की जरूरतों को पूरा करती हों, साथ ही परिवार की इकाई को जोड़ने पर जोर देती हों, न कि तोड़ने पर।

नार्थ ईस्ट के मेरे एक परिचित प्रायः देश में औरतों की गिरती

स्थिति देखकर इस बात पर जोर देते हुए कहते हैं कि उनके यहां कई जनजातियों में मातृ सत्तात्मक पद्धति का प्रचलन है, जहां संपत्ति–जमीन, जायदाद व मकानादि पर केवल स्त्री का अधिकार होता है। वहां की स्त्रियां अपने को सशक्त एवं आत्मनिर्भर महसूस करती हैं तथा सारे निर्णय उनकी सहमति से लिए जाते हैं। उनका कहना है कि यदि पूरे देश में स्त्रियों की स्थिति में सुधार लाना है तो संपत्ति पर सिर्फ औरतों का अधिकार होना चाहिए। पुरूष वर्ग की गुंडागर्दी, राजनीतिक वर्चस्व घटेगा। मेरे दोस्त की बात लोगों को अजीब जरूर लगेगी, पर इस बात में दम है। कई सदियों से दमित स्त्री को एक सदी से कम समय में ही सुदृढ़, सशक्त एवं सम्मानित बनाया जा सकता है। पर क्या ऐसे बदलाव के लिए समाज को तैयार किया जा सकता है?

पंचायतों, निगमों, नगर पालिकाओं आदि में महिलाओं के लिए 50 फीसदी सीटें आरक्षित करना बहुत ही साहसिक एवं उन्नायक कदम है। लेकिन यह कदम सही अर्थों में तब और सार्थक साबित हो पाएंगे जब विधान सभाओं एवं संसद में औरतों की 33 फीसदी हिस्सेदारी सुनिश्चित हो जाएगी। औरतों के लिए वह सुबह कभी तो आएगी।

अर्थव्यवस्था को खाती दीमक

– प्राची सिंह

सूचना अधिकार अधिनियम के तहत सूचना मांगने वाले कार्यकर्ता हों या ईमानदारी से अपना काम करनेवाले सरकारी अधिकारी हों, इन्हें अपना काम नहीं करने दिया जाता; क्योंकि देश में फल–फूल रहे माफिया एवं भ्रष्ट तंत्र के पक्षधरों के काम में ये लोग एक रोड़ा होते हैं, फलतः इन्हें निर्ममता से मारा–पीटा, बेइज्जत किया जाता है या फिर इनकी हत्या कर दी जाती है। हाल ही में, उत्तर प्रदेश के झांसी में बीडीओ के घर घुसकर एक राजनीतिक दल के कार्यकर्ता द्वारा हत्या करना या औरैया में एक इंजीनियर की हत्या व अपहरण या फिर मध्य प्रदेश में युवा आईपीएस अधिकारी नरेंद्र कुमार की जघन्य हत्या, नेताओं, पुलिसकर्मियों व नौकरशाहों के साथ अपराधियों की साठगांठ को एक बार फिर से उजागर करती है। जाहिर है, इस हत्या के तार गैरकानूनी एवं भ्रष्ट कारोबार से जुड़े हुए हैं और ऐसे धंधे राजनीतिज्ञों एवं नौकरशाहों के वरदहस्त के बिना मुमकिन नहीं हैं। पुलिस–प्रशासन व्यवस्था में एक तरह का नियम है कि अगर किसी संगठित क्षेत्र में गैरकानूनी धंधे चल रहे हैं, तो वे तब तक आगे नहीं बढ सकते, जब तक कि पुलिस व दूसरे शक्तिशाली राजनीतिज्ञों या दबंगों अथवा राजनीतिक दल के लोगों की रजामंदी न हो। जब तक राजनेताओं और अधिकारियों को पैसे नहीं खिलाए जाते, तब तक ऐसे कारोबार न तो चल सकते हैं और न ही फल–फूल सकते हैं। आज पूरे देश में तरह–तरह के गैर–कानूनी धंधों की सूची अनंत है।

इन गैरकानूनी धंधों से न सिर्फ तमाम टैक्सों की चोरी होती है, बल्कि अकूत और मूल्यवान सरकारी एवं प्राकृतिक निधियां अंधाधुंध तरीके से दोहन कर देश के पर्यावरण, अर्थतंत्र एवं देश की समृद्धि को नुकसान पहुंचता है। लेकिन आज देश में सरकारी एवं गैर सरकारी मशीनरी इस भ्रष्ट एवं गैरकानूनी व्यवस्था का पोषक बनकर देश की अर्थव्यवस्था को दीमक की तरह समूल नष्ट कर रही है। इस तंत्र के सामने देश की कानून व्यवस्था एवं आम जनता स्वयं को असमर्थ एवं विवश पा रही है।

किसी भी देश या प्रदेश में ये गैर–कानूनी धंधे कैसे चलते हैं? दरअसल, इसमें आपसी सहमति की परिपाटी है। जब पैसों के लालच में, पुलिस व दूसरी संवैधानिक संस्थाओं के साथ अपराधियों की साठगांठ होती है, तो इस पर नियंत्रण व अंकुश लगाने से जुड़े सभी लोग, गैरकानूनी गतिविधियों के दौरान अपनी आंखें मूंद लेते हैं, फिर चाहे वे शीर्ष अधिकारी हों या कनिष्ठ। आज तो ज्यादातर मामलों में, जहां ज्यादा बड़े दांव लगे होते हैं, वहां मुख्यमंत्री एवं मंत्रियों से लेकर नीचे तक पैसे बांटे जाते हैं। हालांकि छोटे मामलों में मध्यम स्तर के कर्मचारियों की भूमिका बढ़ जाती है और पैसे का बंटवारा इनसे लेकर नीचे तक होता है। लेकिन छोटे खेलों में भी रिश्वत से हुई कमाई का एक हिस्सा नेताओं तक पहुंचता है। उन तक पैसा या तो नियमित अंतराल पर पहुंचता है या नियुक्तियों व तबादलों के लिए अग्रिम भुगतान के तौर पर मलाईदार पदों या कर वसूली या फिर पुलिस अधिकारियों यहां तक कि ट्रैफिक पुलिस के तबादले, बड़ी रकम के लेन–देन के आधार पर होनेवाले स्थानांतरण कुछेक नमूने भर हैं। ऐसे धंधों में संगठित अपराधियों का पूरा तंत्र जब काम करने लगे और सब जगह पैसे पहुंच रहे हों, तब उन्हें काम करने की पूरी आजादी प्राप्त हो जाती है। यहां तक कि बहुत सारे नेता, मंत्री एवं अधिकारी भी खुलकर इस धंधे में उतर जाते हैं, क्योंकि "सैंया भए कौतवाल तो डर काहे का" की भावना बैठ जाती है। अगर सचमुच में किसी तरह की कोई अड़चन आती है, चाहे वह लोगों का दबाव हो या मीडिया अभियान, कानूनी मामला हो या एक ईमानदार अधिकारी की कार्रवाई, तो आखिरी वक्त तक अपराधियों के हितों को सरंक्षित किया जाता है। एक बार जैसे ही गैर–कानूनी कारोबार को अंतिम रूप मिलता है, इससे जुड़े सभी लोगों व संस्थाओं को पैसे पहुंचा दिए जाते हैं और इस तरह से अवैध कारोबार का खेल चालू रहता है। जब तक इस धंधे में शामिल सभी लोगों तक धन पहुंचता रहता है, तब तक सब कुछ ढर्रे पर रहता है। आज इस भ्रष्ट व्यवस्था से मीडिया भी अछूता नहीं है। साधारण संवाददाताओं से लेकर रिपोर्टरों व संपादकों के पास भी असीम धन दौलत कहां से आ रही है। ये लोग भी इन गैरकानूनी धंधों को देखकर भी नहीं देखते क्योंकि बंद आंखों से ही वह सबकुछ प्राप्त हो जाता है जिसे खुली आंखों से नहीं पाया जा सकता था।

लेकिन सभी लोग भ्रष्ट नहीं होते। यह प्रकृति का नियम है। यदि एक खेत में कोई फसल बोई जाती है तो उसमें कुछेक बिजातीय पौधे यानि कि खरपतवार निकल ही आते हैं, आज भ्रष्ट समाज की फसल में ये कुछेक ईमानदार खरपतवार ही हैं जो भ्रष्ट फसल की आंखों में

चुभते हैं। हर दौर में ऐसे लोग होते हैं, जो अपनी अंतरात्मा की आवाज सुनते हैं और इसके आधार पर कार्रवाई करते हैं। जब भी ऐसा होता है, अपराधियों और नौकरशाहों के बीच का संतुलन बिगड़ जाता है क्योंकि भ्रष्टाचार एवं गैर–कानूनी धंधे में एक अधिकारी भी भारी पड़ जाता है। इससे गैर–कानूनी धंधे ठप पड़ने लगते हैं। ऐसे में उनके पास यही रास्ता बचता है कि ईमानदार अधिकारियों को बाहर का रास्ता दिखाओ। यदि बाहर न जा पाए तो उसे समूल नष्ट कर दो।

पुलिस अधिकारियों को रास्ते से हटाने या बाहर निकालने के कई तरीके होते हैं। सबसे पहला यह कि कमाऊ जगहों पर उन्हीं अधिकारियों को तैनात किया जाए, जो भ्रष्ट हों। यह भी इसलिए होता है, क्योंकि ऐसे पद बिकाऊ होते हैं और भ्रष्ट लोग इन पदों को खरीदने की होड़ में शामिल रहते हैं। पद को खरीदने के बाद अधिकारी भ्रष्टाचार के बड़े खेल में संल्पित हो जाते हैं क्योंकि इन्हें अपने पैसे का दस गुना पैसा निकालना होता है। दूसरा तरीका यह है कि अगर यह अपरिहार्य हो कि किसी भ्रष्ट तंत्र में एक ईमानदार अधिकारी की तैनाती की जाए, तो ऐसे अधिकारी को रखा जाता है, जो दब्बू, डरपोक या नरमदिल हो। इन्हें धृतराष्ट्र कह सकते हैं। हालांकि ऐसे अधिकारी खुद तो ईमानदार होते हैं, परंतु वे दब्बूपने या डर के कारण भ्रष्टाचार के खिलाफ खड़े होने का साहस नहीं कर पाते। वे माफिया और माफिया को मदद पहुंचाने वाले अधिकारियों के खिलाफ कार्रवाई नहीं करते। ईमानदार अधिकारी को प्रताड़ित करने का भरोसेमंद व आसान तीसरा तरीका यह है कि ईमानदार अधिकारियों का कहीं और तबादला कर दिया जाए। अगर ऐसे अफसर फिर भी अपना मुंह खोलते हैं, तो उनके खिलाफ तरह–तरह के मनगढ़ंत आरोप लगाकर जांच समितियों के दबाव के जरिये चुप कराया जाता है। ऐसे अधिकारियों को सबक सिखाने का चौथा तरीका यह भी है कि ऐसे नौकरशाहों की सालाना निजी रिपोर्ट को खराब कर दिया जाए, ताकि इन्हें पदोन्नति नहीं मिल सके। कई मामलों में माफिया को कुछ ज्यादा ही ओवर कॉन्फीडेंस होता है कि पूरा तंत्र उनकी जेब में हैं। इन्हीं मामलों में पुलिस अधिकारियों पर हमले होते हैं। जैसे कि नौजवान आईपीएस नरेंद्र कुमार या फिर झांसी के बीडीओ के घर घुसकर या फिर औरैया के इंजीनियर के साथ हुआ। यह इस तरह की कुछेक घटनाएं नहीं हैं। इससे पहले महाराष्ट्र के जलगांव जिले के एडिशनल कलैक्टर को तेल माफिया ने जिंदा जला दिया था। या फिर लखीमपुर–खीड़ी (लखनऊ) में पेट्रोल माफिया ने एक होनहार अधिकारी मंजूनाथ षडमुखम को मार डाला था।

यकीनन ये सभी काफी जघन्य अपराध हैं, लेकिन वे घटनाएं भी कम त्रासद एवं जघन्य नहीं हैं, जिनमें ईमानदार अधिकारियों की हत्या शारीरिक हमले की बजाय व्यवस्था की चालाकियों से होती हैं। ऐसी हजारों घटनाएं हैं। एक ईमानदार अधिकारी पर हमला करके या हत्या के बाद उस के परिजनों के प्रति अब सहानुभूति दर्शाने वाले कई लोग सामने आ रहे हैं। यह उचित भी है। परंतु जब किसी ईमानदार अधिकारी को यही भ्रष्ट तंत्र प्रताड़ित करता है, तो उस वक्त उसके साथ कोई खड़ा नहीं होता। उसकी पूरी जिंदगी बेवजह के तबादलों व पदों की भेंट चढ़ जाती है। जिसका एक स्पष्ट उदाहरण आईपीएस किरण बेदी का है। उन्हें ऐसी स्थिति में ला दिया जाता है जहां उसके पास न तो अधिकार होता है और न ही शक्ति बचती है। कई बार थक–हार कर वे मौन हो जाते हैं या फिर "इफ यू कांट बीट, ज्वाइन देम" की अंग्रेजी कहावत को चरितार्थ करते हुए भ्रष्टाचार की नदी के साथ–साथ अपनी जिंदगी बहाने के लिए विवश हो जाते हैं।

इस पूरी समस्या का हल आसान नहीं है। लेकिन इसकी शुरुआत कुछेक तरह से की जा सकती है। पहला, अमेरिका की भांति भारत में भी एक ऐसा कानून बनाया जाए, जिसके मुताबिक, ईमानदार अधिकारियों को प्रताड़ित करना दंडनीय अपराध हो। दूसरा, वक्त आ गया है कि नेताओं से अधिकारियों व उच्च नौकरशाहों के तबादले व पोस्टिंग के अधिकार ले लिए जाएं और इसे एक स्वायत्त न्यायिक संगठन के माध्यम से समायावधि के अनुसार किया जाए।

भारत में एक अत्यंत सशक्त लोकपाल, स्वायत्त जांच एजेंसी, स्वायत्त न्याय प्रणाली, निष्पक्ष एवं स्वतंत्र चुनाव तंत्र का जल्द से जल्द गठन किया जाए। इन सभी संगठनों में पदों पर नियुक्ति स्वच्छ एवं पारदर्शी तरीके से लोकसेवा आयोग जैसे पैनल के माध्यम से की जाए। कालाधन, कालाबाजारी, विभिन्न माफियाओं के लिए सख्त कानूनी दंड विधान एवं त्वरित मुकद्दमा निपटान की व्यवस्था की जाए। दीर्घकालिक न्याय व्यवस्था एवं न्याय में देरी से लोगों का पूरे तंत्र से विश्वास उठ जाता है और साथ ही ऐसी न्यायिक प्रकिया सभी पक्षों के लिए शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक रूप से बहुत कठिन एवं निर्मम साबित होती है।

इनसे शत प्रतिशत निदान भले ही न हो, पर हम कुछ हद तक समाधान की ओर अवश्य बढ़ेंगे। यदि हमारी सरकारें ऐसा नहीं करती तो न सिर्फ हम भारतीयों का, बल्कि पूरी दुनिया का विश्वास विश्व की सबसे बड़ी प्रजातांत्रिक व्यवस्था से उठ जाएगा। भारत का विश्व की नंबर एक अर्थव्यवस्था बनने का सपना केवल सपना ही रह जाएगा या फिर 50 साल और आगे खिसक जाएगा। अब वह समय आ गया है, जब हमें इसकी शुरुआत हर हाल में कर देनी चाहिए।

भय की गांठ, अभय की कुंजी

सौजन्य से–
श्री गोपालकृष्ण गांधी,
(लेखक पूर्व प्रशासक, राजनायिक व राज्यपाल हैं।)

(साभार उद्धृत)

'भय' की परिभाषा क्या है? परिभाषा से पहले पर्याय देखते हैं। 'भय' का सबसे परिचित पर्याय है 'डर'। भय और डर के निषेधी (विपरीत) शब्द भी प्रसिद्ध हैं: 'अ–भय' और नि–डर'। कई बार प्रतिवाद से छवि साफ हो जाती है और उत्तम परिचय मिलता है उदाहरण से।

'भय' के अर्थ को, उसकी अंतर्वस्तु को समझने के लिए 'अभय' से मदद मिलती है और 'अभय' को समझने के लिए मिसाल बे–मिसाल है। हमारे जमाने में, यानी बीसवीं सदी में और अब इक्कीसवीं सदी में हिंद के कौन–से लोग 'अभय' और 'निडर' दिखते हैं? मेरी समझ सीमित है, मेरी स्मृति सीमांकित। इसलिए 'अभयों' को मेरी सूची सांकेतिक है, संपूर्ण नहीं। उसमें हर पाठक संशोधन करना चाहेगा। नाम निकालना नहीं, तो जोड़ना जरूर चाहेगा। हर पाठक वैसा जरूर करे।

मैं नाम प्रस्तुत करता हूं।

सबसे पहला नाम मुझे सूझता है स्वामी विवेकानंद का। अपूर्व साहस था उस पर नर–शार्दूल में! कैसा साहस? हमें, सह–भारतवासियों को हमारे बारे में कड़वे सच सुनाने का साहस। 27 अक्टूबर 1894 को वॉशिंगटन से एक खत में लिखते हैं: 'मुझे भगवान में विश्वास है और इंसान में विश्वास है। जो इंसान तकलीफ में है, उसकी मदद करने में मुझे विश्वास है। मैं औरों को बचाने के लिए जहन्नुम तक जा सकता हूं। यहां, पाश्चात्य लोक में लोगों ने मुझे खाने को खुराक दी है, रहने को जगह दी है, दोस्ती दी है, पनाह दी है– कट्टर से कट्टर ईसाइयों ने भी। और हम लोग क्या करते हैं?..... .... भारत के भाग्य पर तो हमने उस ही दिन ताला लगा दिया था, जिस दिन हमने 'म्लेच्छ' शब्द को जन्म दिया.....'उस ही खत में वे एक पुनश्च में लिखते हैं, 'और इन दो मनोभावों से बचे रहो: सत्ताधिकार का मोह और ईर्ष्या।'

एक और जगह स्वामीजी ने बांग्ला में कहा है: 'हे चिर–पद–दलित श्रमजीवी, आमि तोमाके प्रोणाम कोरि, 'अर्थात, 'हे चिर–पद–दलित श्रमजीवी, मैं तुम्हें प्रणाम करता हूं।

इन तीनों उदाहरणों मे हमें स्वामीजी कह रहे हैं कि हम भारतवासी परायों की पीड़ाओं को, विशेषकर श्रमजीवियों की जरूरतों को पहचानने में सुस्त हैं, ढीले हैं। यानी, हम अपने में अपने स्वार्थ में लीन हैं। हम में मोह है, सत्ता का, अधिकार का, प्रभुत्व का। और हमें खाए जाती है ईर्ष्या। यानी, भारत की एक जानी–मानी बीमारी है ईर्ष्या, असूया, जलन।

आज इस हकीकत को कहने वाला आदमी अभय कहलाएगा, निडर कहलाएगा, क्यूं? इसलिए कि हमें पर–निंदा की आदत पड़ गई है, आत्म–निंदा, आत्म–आलोचन की प्रणाली हमें प्रिय नहीं और जहां तक प्रणाम की बात है, आज श्रमजीवी को कौन प्रणाम करता है? आज प्रणाम होते हैं उनको, जिनसे हमें अनुग्रह चाहिए, जिनकी कृपादृष्टि की हमें जरूरत है और जिनको किसी और के प्रणाम को स्वीकार देख हमें ईर्ष्या हो सकती है, जलन हो सकती है।

दूसरा नाम मुझे इस ही दर्जे में दिखता है मोहनदास करमचंद गांधी का, तीसरा शहीद भगत सिंह का, चौथा नेताजी सुभाषचंद्र बोस का और पांचवां बाबासाहेब आंबेडकर का। इन पांच महापुरुषों ने हमें आत्म–आलोचना का मतलब सिखाया।

गांधी के सत्यवचन कठोर थे। भगत सिंह का जेल से लिखा आखिरी खत साफगोही को उस शिखर पर ले जाता है, जहां वह शायद कभी न पहुंची थी। नेताजी ने हमें साफ–साफ कहा कि हम कुर्बानी की बात करते हैं, कुर्बान होते नहीं। और बाबासाहेब ने हमारे सामने हिंदुस्तान का आईना खड़ा किया, यह बोलते हुए कि 'देख, यह तेरी असली सूरत है– अन्यायपूर्ण, अश्रुपूर्ण, अहंकारपूर्ण...।'

निडर वह नहीं, जो कहता है कि हम सर्वोच्च हैं, सबसे स्वच्छ हैं, हम–सा कोई नहीं। निडर वह है, जो कहता है कि मुझे भारत से प्रेम है, पर मैं उस भारत की सृष्टि के लिए काम करूंगा, शहीद और कुर्बान होऊंगा, जो न्यायपूर्ण हो, जिसमें ऊंच–नीच कल प्रातः भले ही मिट न भी जाए, लेकिन उसको मिट जाने की 'नोटिस' जरूर मिल जाए।

भय उस बीमारी को कहते हैं, जो कड़वे सच बोलने में झिझकती है, जो लोकप्रियता की गुलामी में खोई हुई है, जो जनप्रिय रहना चाहती है। चुनावों में उम्मीदवार अभय कम, निडर कम, भयभीत ज्यादा, डरे–डरे से, सबको खुश करने में तुले हुए, किसी को रुष्ट न करने की फिक्र में पड़े हुए ज्यादा मिलते हैं। यह उनकी गलती नहीं, हमारी है कि हमने प्रजातंत्र को एक खुशामदी तरीका बना दिया है।

राजनीति आज न प्रसन्न–वदना है न शोक–वदना। वह चिंतामुखी है। इस फिक्र में है कि कहीं लोकप्रियता न चली जाए। हितवादिता नहीं, मितवादिता राजनीति की राजभाषा और परिभाषा बन गई है।

भय मिलता है साफल्य के सोपान में, तरक्कुई की शाहराहों में। कहीं फिसल न जाऊं मैं, कहीं लुढ़क न पड़ूं मैं।

और अभय? वह यतीम मिलता है उस विपदा की लपेट में, उस दुविधा की चपेट में, जहां किसी की उदारता में नहीं, बल्कि खुद की सहनशक्ति में, धैर्य में, हौसले में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। भय मिलता है दुष्टता में, कुबूल न की हुई गलतियों की गिलाजत में। कहीं पकड़ा तो ना जाऊंगा? कहीं फंस गया तो?

भय मिलता है आत्म–निर्बलता में, जिसका फायदा उठाता है दबंग और धौंसिया। भय मिलता है आत्म–ग्लानि के अंतिम चरण में, जिसका फायदा उठाता है चतुर–छलिया। भय मिलता है आत्म–घोषी के अंजाम में, जिसका फायदा उठाता है, वह दूसरा दंभी, जिसकी बारी आगे आने की है।

अभय मिलता है आत्म–गौरव में, आत्म विश्लेषण में, आत्म–चिंतन में। अभय मिलता है आत्म–विचार में।

अभय मिलता है उस साहस में, जो कि कहे, 'नियति को मैं पहचान नहीं सका, जान नहीं सकता। लेकिन खुद को और अपनी 'खुदी' को पहचानता हूं, जानता हूं। और मेरी वह 'खुदी' जब तक मुझे कोसती नहीं, मुझे किसी से भय नहीं।'

"थोड़ा पढ़ना, ज्यादा सोचना, कम बोलना,
ज्यादा सुनना, यही बुद्धिमान बनने के उपाय हैं"

रविन्द्रनाथ टैगौर

खगोल विज्ञान में भारतीय सर्वोच्च थे

भारत में सूर्य, चन्द्र एवं पृथ्वी की गति के आधार पर रात–दिन, महीनों व वर्षों की सटीक गणना तथा गृहों एवं नक्षत्रों की चाल के आधार पर पूर्वानुमान लगाने का सिलसिला कई हजार साल पुराना है। गणना के आधार पर राशि एवं नक्षत्रों की गति के आधार पर 10 या 20 साल नहीं बल्कि 100 एवं 500 साल की जंत्रियां एवं पत्रांक (पत्रे) बनाने की बहुत प्राचीन परंपरा है और आज भी उनके आधार पर धातुओं, फसलों के व्यापार के उतार–चढ़ाव तथा मौसम संबंधी जानकारियां भी दी जाती थी, जो काफी हद तक सटीक भी होती है। इसका साफ मतलब है कि भारत में दसियों हजार साल पहले से खगोल विज्ञान की जानकारी के आधार पर गणनाएं करके मौसम, ऋतुओं, त्यौहारों आदि को सही तिथि निर्धारित की जाती थी। हाल ही में, भारत में पाषाण कालीन ऐसे प्रमाण मिले हैं जो हमारे दावे को सत्य सिद्ध करते हैं।

अब आपको विल्टशायर काउंटी स्थित पाषाणकालीन स्मारक स्टोहेंज को देखने के लिए ब्रिटेन जाने की जरूरत नहीं है। हाल ही में मुंबई स्थित टाटा इंस्टीटयूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च (टीआईएफआर) और मनिपाल यूनिवर्सिटी के संयुक्त शोध दल ने कर्नाटक में ऐसे 26 प्रागैतिहासिक स्मारकों की खोज की है।

शोधकर्ताओं के मुताबिक ये स्मारक मैंगलोर से 140 किलोमीटर दूर स्थिति बाइसी नामक स्थान पर मिले हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार संभवतः इस स्थान का इस्तेमाल खगोलीय वेधशाला के रूप में किया जाता था। यह इस बात बात का पुख्ता सबूत है कि 10 हजार ईसा पूर्व से भी पहले भारत में सूर्य की गति के आधार पर ऋतुओं का पूर्वानुमान लगाने के लिए पत्थरों का ढांचा खड़ा किया जाता था। कंप्यूटर द्वारा विश्लेषण में पाया गया कि इन्हें पंक्तिबद्ध उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशा में खड़ा किया गया है। ये संक्राति (साल के सबसे लंबे और छोटे दिन) और इक्वीनॉक्स (साल का वह दिन जब दिन और रात बराबर होता) से मेल खाते हैं। खगोलशास्त्री मयंक वहिया के अनुसार 'संभवतः इसका इस्तेमाल पाषाणकालीन लोग ऋतुओं का पूर्वानुमान लगाने में करते थे।

डॉ. अमर सिंह सचान, राजभाषा अधिकारी

बांड जारी करके निधि संग्रहण

पुनर्वित्त की भारी मांग को देखते हुए राष्ट्रीय आवास बैंक को बांड जारी करके अपनी निधियां जुटाने की योजना को पुनः शुरू करना पड़ा। आवास वित्त कंपनियों के शीर्ष निकाय के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, श्री आर.वी. वर्मा के अनुसार, बैंक निधियों की अपनी बढ़ती जरूरतों को पूरा करने के लिए निजी तौर पर बांडों को आबंटित करके 500 करोड़ रुपये जुटाने की योजना बना रहा है।

उन्होंने प्रेस को बताया कि निधियां संग्रहण के लिये यह उपयुक्त समय नहीं है। उत्पादन अभी भी कम हो रहा है। पुनर्वित्त की हमारी मांग बहुत अधिक है। उसे पूरा करने के लिये हमें निधियों की जरूरत है। यह संसाधनों को जुटाने की हमारी रणनीति का हिस्सा है। कूपन साइज 9.4–9.5 प्रतिशत की रेंज में हो सकता है। हालांकि, अभी इसका निर्णय नहीं लिया गया है। हम वर्ष 2012 में 9,000 करोड़ संग्रहित करने की आशा करते हैं।

प्रस्तावित बांड इश्यू में वित्तीय संस्थान, बैंक और विदेशी संस्थान निवेशक अंशदान करेंगे। ये रेटेड पेपर हैं और इश्यू बंद होने के अगले दिन से ही गौण बाजार में इनका क्रय–विक्रय किया जा सकता है। इससे पहले अक्तूबर, 2011 में रा.आ. बैंक ने तीन वर्ष की अवधि वाले 250 करोड़ रु. जुटाने की योजना को छोड़ दिया था क्योंकि तब इस इश्यू को भारी समर्थन नहीं मिला था।

जुलाई और फरवरी के बीच बैंक ने आवास वित्त कंपनियों को लगभग 10,000 करोड़ रु. संवितरित किये और कुछ मात्रा में बैंकों का भी वित्त पोषण किया। गृह ऋण कंपनियां रा.आ. बैंक से ऋण लेती हैं और ग्राहकों को ऋण देती हैं। रा.आ. बैंक आशा करता है कि जून 2012 तक लगभग 13,400 करोड़ रु. संवितरित हो जाएंगे।

आवास वित्त कंपनियों का विनियामक ज्यादातर दो श्रेणियों को ऋण देता है: पांच लाख रुपये तक के ग्रामीण आवास और लघु आवास ऋण। यह सामान्यतः ग्रामीण आवास पर 6.50–7–7.50 प्रतिशत की दर से ब्याज वसूल करते हैं जबकि यह सामान्यतः छोटे ऋणों के लिये 50 बेसिस प्वाइंट (आधार बिंदु) कम होता है। ऋण चुकता करने की अवधि 7 से 15 वर्ष तक होती है।

बांड जारी करने का प्रयोजन निधियां जुटाने के स्रोतों में विविधता लाना भी है। बांड इश्यू से आस्ति देयताओं के बेहतर प्रबंधन में सहायता मिलती है। यह उपाय बैंकों से उच्च ब्याज दर पर ऋण लेने की तुलना में सस्ता दीर्घकालीन उपाय है। अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक ने बताया कि रा.आ. बैंक अपने अधिक लागत वाले ऋणों का निपटान कर रहा है।

भारत में आवास बाजार का समसामयिक रुझान -एक अध्ययन

– सौरभ शेखर झा, पत्रकार एवं अनुवादक

पूरा विश्व जहां एक ओर मंदी की मार और शेयर बाजार की गिरावट से परेशान है वहीं दूसरी ओर रोजगार का संकट सुरसा की तरह मुंह फाड़ रहा है। ऐसे समय में भारत जैसे विकासशील देश में विकास की गाड़ी का पटरी पर बने रहना अपने आप में अनोखा है और इसके लिए कहीं न कहीं हमारी मिश्रित अर्थव्यवस्था सुदृढ़ आधार है। मनुष्य अपने प्रारंभिक काल से ही रोटी, कपड़ा और मकान के लिए जद्दोजहद करता रहा है और आज भी हर किसी का सपना होता है अपना आशियाना। वैसे भी भारत जैसे देश में शुरू से ही अपना मकान होना मात्र एक संपत्ति से ज्यादा, शान की बात समझी जाती है।

भारत गांवों का देश माना जाता है लेकिन आधुनिक जीवनशैली के साथ–साथ देश में शहरों का विकास रोजगार के केन्द्र के रूप में विकसित होना शुरू हुए और लोग रोजगार की तलाश में शहरों की ओर आने लगे। देश की जनसंख्या भी लगातार बढ़ती गई और देश में अच्छे आवास और पर्याप्त सुविधाओं की जरूरत महसूस की जाने लगी। जमींदारों से भूमि की खरीद व बिक्री से शुरू हुआ दौर आज प्रोपर्टी डीलिंग तक आ गया है। आज आवास कारोबार इतने फायदे का सौदा हो गया है कि देश के बड़े–बड़े व्यावसायिक घराने इस क्षेत्र में पैसा लगा रहे हैं और स्थिति ऐसी हो गई है कि देश की गली–गली में प्रोपर्टी के नाम पर दुकानें खुल चुकी हैं।

अगर हम देश के आवास बाजार की गहनता से पड़ताल व अध्ययन करें तो पाते हैं कि जहां एक ओर पूरे विश्व के आवास बाजार में गिरावट दिख रही है, वहीं हमारे देश में वर्ष 2011 के दूसरी तिमाही में भी यह बाजार अपनी रफ्तार बनाए हुए है। देश में आवास कीमतों में आश्चर्यजनक तरीके से बढ़ोत्तरी दिख रही है। जबकि आर्थिक मोर्चे पर गिरावट देखी जा रही है जिसके फलस्वरूप वर्ष 2011 की दूसरी तिमाही के दौरान देश का सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) मात्र 7.7 प्रतिशत रहा जोकि पिछले छह तिमाही में सबसे कमजोर है। ये गिरावट उच्च ब्याज दर और खनन (1.8 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि), निर्माण (1.2 प्रतिशत) और अवसंरचना (7.2 प्रतिशत) क्षेत्र के कमजोर प्रदर्शन का परिणाम है। नाइट फ्रेंक के ताजा वैश्विक आवास कीमत सूचकांक में भारत आवासीय कीमतों के वार्षिक वृद्धि में 50 देशों में दूसरे स्थान पर है जोकि हमारे देश में आवास बाजार की अच्छी स्थिति को प्रदर्शित कर रहा है। वर्ष 2011 की पहली तिमाही में आवास कीमतों में 21.3 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है।

राष्ट्रीय आवास बैंक के अनुसार वर्ष 2011 की दूसरी तिमाही के

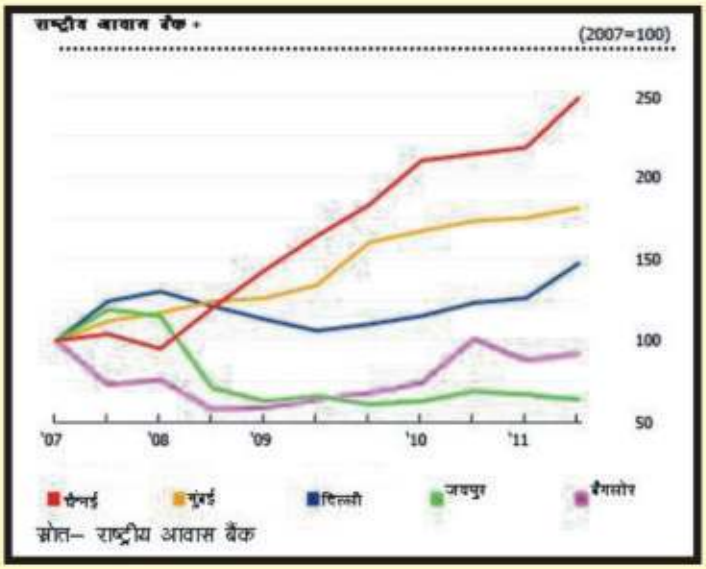

स्रोत– राष्ट्रीय आवास बैंक

दौरान नई दिल्ली में आवास कीमतों में 33.64 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जबकि इसी समय पिछले वर्ष यह वृद्धि 16.67 प्रतिशत थी। यह वृद्धि न सिर्फ दिल्ली में है बल्कि देश के अन्य हिस्सों में भी दिख रही है। विशेष रूप से उन शहरों में जहां बहुराष्ट्रीय कंपनियां हैं या जहां आउटसोर्सिंग का काम चल रहा है। यहां तक कि हैदराबाद, कोच्चि और बैंगलूरु जैसे शहर जो उत्पादन और इलेक्ट्रिोनिक क्षेत्र पर निर्भर हैं और जिन्होंने 2009 की मंदी की मार झेली है वहां भी अब हालात पहले से बहुत बेहतर नजर आ रहे हैं। वर्ष 2011 की पहली और दूसरी तिमाही के दौरान देश के लगभग सभी बड़े शहरों में आवास कीमतों में वृद्धि दर्ज की गई है। एनएचबी के आंकड़ों के अनुसार जहां भोपाल में अप्रत्याशित तौर पर 34.31 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है वहीं फरीदाबाद 33.33 प्रतिशत और कोच्चि में यह वृद्धि 24.42 प्रतिशत है। चैन्नई में औसतन कीमत वृद्धि 13.76 है। मुम्बई और बैंगलूरु में भी वृद्धि का यह दौर जारी है। एनएचबी आवास सूचकांक (रेजीडेक्स) प्रत्येक तिमाही पर अपनी रिपोर्ट पेश करता है जिसमें मात्र जयपुर (-4.48%) और कोलकाता में (-8.06%) में आवास कीमतों में गिरावट दिख रही है। अगर हम इस वृद्धि को पिछले साल से तुलना करें तो इस वर्ष जिन पांच शहरों में सबसे अधिक वृद्धि देखी गई है वे हैं भोपाल (46.41%), फरीदाबाद (44.74%), चैन्नई (35.52%), बैंगलूरु (35.29%) और नई दिल्ली (33.64%)। मजबूत व्यावसायिक माहौल के कारण वर्ष 2011 के दौरान आवासीय संपत्ति मांगों में मजबूती बनी हुई है। हालांकि ऊंची दरें डराती भी हैं। भारतीय

रिजर्व बैंक ने सितम्बर 2011 में दोबारा अपना रेपो रेट 25 बेसिस अंकों के साथ 8.25 प्रतिशत कर दी है । मार्च 2010 से ऐसा 12वीं बार हुआ है जबकि केंद्रीय बैंक ने ब्याज दर में वृद्धि की है। देश में आर्थिक हालात कैसे है इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि सितम्बर 2011 में 9.87 प्रतिशत के साथ मुद्रास्फीति 13 महीने के सर्वोच्च ऊंचाई पर है। यह भारतीय रिजर्व बैंक के लक्ष्य से 4 से 4.5 प्रतिशत से दुगना है। देश की जीडीपी जो वर्ष 2010 में 10 प्रतिशत थी वर्ष 2011 में 8 प्रतिशत ही रह गई है।

आवास कीमतों में उछाल

जहां तक बात भारतीय आवास कीमतों में वृद्धि की है तो यह वर्ष 2002 से 2007 तक अपनी पूरी रफ्तार में थी। मजबूत आर्थिक वृद्धि और बढ़ते शहरीकरण ने आवास कीमतों में उछाल को बढ़ावा दिया। हालांकि शहरों में आवासीय बुलबुले के बाधक कारण रहे अपर्याप्त संरचना, योजना की कमी और भूमि उपयोग के पुराने कानून। आसान ऋण एवं ब्याज दर कम होने के कारण कीमतों में उछाल आती रही। वर्ष 2004 से वर्ष 2005 तक आवास ऋण दर ऐतिहासिक रूप से 7.5 प्रतिशत तक गिर गई थी। वर्ष 2005 से 2007 तक आर्थिक वृद्धि 8.9 प्रतिशत रही जिसने भारत को सबसे तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था बना दिया था। वर्ष 1990 के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रमुख क्षेत्रों में उदारीकरण के कारण देश में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में जबरदस्त तेजी आई। आईटी और बीपीओ उद्योग में आए उछाल ने रोजगार वृद्धि को तेजी से बढ़ाया और इस कारण आवास की मांग में जबरदस्त वृद्धि हुई जिसका सीधा असर पड़ा देश के निर्माण और दूरसंचार क्षेत्र पर। हालांकि अभी तक इन चीजों ने आवास कीमतों में वृद्धि को बढ़ावा दिया था लेकिन इससे भी इंकार नहीं किया जा सकता है कि आशावादिता ने भी अपनी अहम भूमिका निभाई थी। वर्ष 2000 से वर्ष 2006 तक आवासीय संपत्ति कम किफायती थे। वर्ष 2002 में मुम्बई जैसे शहर में घर की कीमत औसत वार्षिक आय की लगभग 85 गुना थी जोकि 2006 में 100 गुना हो गई। विकासकों की पूंजी में जबरदस्त वृद्धि हुई जिसका इस्तेमाल उन्होंने बड़े भूखंडों को ऊंची कीमतों में खरीदने में लगाया और इस कारण उन्हें बड़े एवं विलासितापूर्ण फ्लैटों को बहुत ऊंची दरों पर बेचना पर्याप्त आसान हो गया।

वैश्विक मंदी का पूर्व दृश्य

वर्ष 2008 में जब वैश्विक मंदी ने अमेरिका जैसी मजबूत अर्थव्यवस्था को हिला दिया तो बाकी देशों के शेयर बाजार भी थर्रा गए और हर तरफ मंदी के इस महासमर ने अपने करतब दिखाने शुरू कर दिये। ऐसे में भारत के विकासकों के सामने सबसे बड़ी चुनौती यह आई कि वे किस तरह आवासों में लगे अपने निवेश की उगाही करें और ऐसे समय में यहां के विकासकों ने आवास की कीमतों में कटौती की और लाभप्रद प्रस्ताव पेश किए जिनमें टी.वी., कारें, फर्नीचर, इंटरनेट कनेक्शन मुफ्त देना आदि रहे। लेकिन फिर भी आवास मांगों में लगातार भारी कमी बनी रही। अगर हम मांग पक्ष पर ध्यान दें तो एसोचेम के मई 2009 लग्जरी आवास में 50 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई जबकि किफायती आवास की मांग में 10 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई। दिल्ली जैसे शहरों में इस दौरान गिरावट 13.08 प्रतिशत रही जोकि काफी चिंता उत्पन्न कर रहे थे। अब इस संकट से उबरने के लिए विकासकों ने अपना ध्यान निम्न आय आवास की ओर केंद्रित किया। लेकिन जल्द ही मंदी के बादल भारतीय अर्थव्यवस्था से छंटने लगे और आवास कीमतें जल्द ही दोबारा बढ़ने लगी।

ब्याज दर में बढ़ोतरी जारी रह सकती है

सितम्बर 2011 में आरबीआई ने अपने नीति आधारित ऋण दर में 25 बेसिस प्वाइंट की बढ़त के साथ 8.25 प्रतिशत कर दिया जो कि मार्च 2010 से अभी तक 12वीं बार बढ़ी थी। आरबीआई के मूल उधार दर में भी वृद्धि हुई और मार्च 2011 के अनुसार यह 8.25 प्रतिशत (निम्न) और 9.50 प्रतिशत (उच्च) है।

देश के आर्थिक चिंतक एवं नीति विशेषज्ञ इस हालात से खासे परेशान रहे हैं और उन्होंने अब अपना पूरा ध्यान मुद्रास्फीति को कम करने और विकास की रफ्तार को फिर से पटरी पर लाने की ओर केंद्रित किया। इसका परिणाम यह हुआ है कि निर्माण क्षेत्र में ब्याज दर बढ़ोतरी में कमी आ रही है। वर्ष 2011 की दूसरी तिमाही में ब्याज दर में मात्र 1.2 प्रतिशत की बढ़ोतरी पाई गई जोकि पिछले साल की तुलना में 8.2 प्रतिशत कम है। आशा है कि वर्ष 2012 में निर्माण क्षेत्र में विकास की यह चमक बनी रहेगी।

भारत में मॉर्टगेज बाजार

वर्ष 1991 के आर्थिक सुधार के बाद भी देश का मॉर्टगेज बाजार कई समस्याओं से जूझ रहा है मसलन :

- आज भी जब कि देश में प्राइवेट बैंकिंग का दौर आ गया है, अधिकतर बैंक सामान्य या उच्च आय वाले क्षेत्र को ही ऋण देना पसंद कर रहे है और निम्न आय वाले वैयक्तिक को ऋण देने के लिए सीमित विकल्प रखें हैं।
- अधिकतर घरेलू वाणिज्यिक एवं सार्वजनिक बैंकों में सरकार की दखलअंदाजी बहुत अधिक है, जोकि कहीं न कहीं उनके स्वतंत्र कारोबार को प्रभावित करते हैं।
- पुरोबन्ध हेतु कोई भी उपयुक्त वैधानिक संरचना नहीं है।
- स्वामित्व की समस्याएं अभी भी अनियंत्रित हैं।

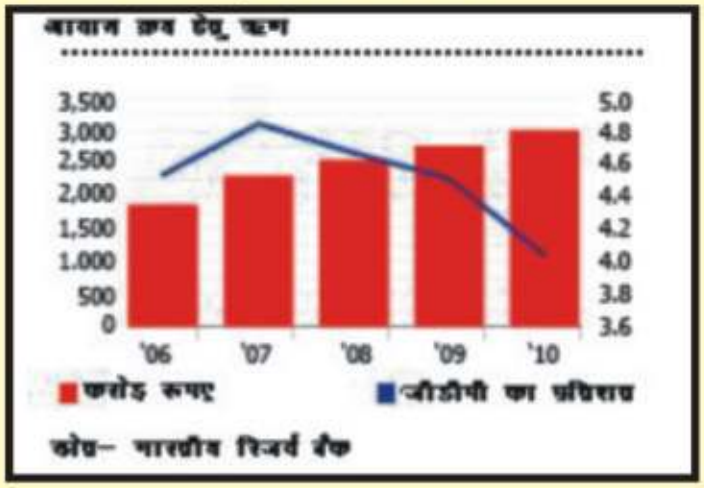

इन समस्याओं का परिणाम यह हुआ कि सकल घरेलू उत्पाद में आवास ऋण अनुपात बहुत कम हो गया है और वर्ष 2010 में आवास ऋण भारत की जीडीपी का मात्र 4.04 प्रतिशत रहा। भारत में अग्रणी मॉर्टगेज ऋणदाता कंपनी एचडीएफसी है जिसके बाद भारतीय स्टेट बैंक का नंबर आता है। वर्ष 2010 में कुल आवास ऋण में पिछले वर्ष की तुलना में 8.66 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है जोकि पिछले वर्ष के 2769.57 अरब रू. से बढ़कर 3009.29 अरब रू. हो गया है। अधिकतर प्रमुख बैंकों और वित्तीय संस्थानों में मॉर्टगेज हेतु अस्थाई ब्याज दर 10.75 प्रतिशत से 12 प्रतिशत है और मॉर्टगेज के लिए स्थिर ब्याज दर 13 से 14 प्रतिशत है। अधिकतर भारतीय आवास ऋण का एलटीवी 85 प्रतिशत है।

फिर भी लाभ (किराया) कम है

ग्लोबल प्रोपर्टी गाइड रिसर्च के मुताबिक भारत में अब भी किराया लाभ बहुत कम है जबकि खरीद–फरोख्त में छोटे से छोटा अपार्टमेंट बड़ा फायदा दे रहा है।

- मुम्बई में छोटे अपार्टमेंटों की कीमत 11,600 से 14,000 अमेरिकी डॉलर प्रति वर्ग मीटर है हालांकि तुलनात्मक रूप से किराया लाभ कम है।
- दिल्ली में कीमत 4.000 अमेरिकी डॉलर प्रति वर्ग मीटर है जो कि मुम्बई के मुकाबले सस्ती है।
- बैंगलूरु में वार्षिक (किराया) लाभ दिल्ली और मुम्बई की तुलना में बहुत अधिक है।

कोलियर्स के अनुसार वर्ष 2011 की पहली से दूसरी तिमाही में आवासीय कीमतें :

- मुम्बई के चुनिंदा शहरों में किराए में 2 से 5 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।
- बैंगलूरु में प्रमुख आवासीय संपत्ति दर 3 से 7 प्रतिशत बढ़ी है।
- दिल्ली की प्रमुख आवासीय संपत्ति दर में 2 से 4 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है।
- चैन्नई में मांग बढ़ने और आवासीय संपत्तियों की कमी के कारण किराए में 2 से 5 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

पुरानी काश्तकारी कानूनों ने भारतीय किराया बाजार को बाधित किया है। ये कानून आमतौर पर बहुत कमजोर है और इनको लागू करने में भी काफी दिक्कतें आती है। हालांकि बहुत से बाजार उन्मुख कानूनों ने इन्हें बदला है लेकिन अभी भी इनके परिणाम आने का इंतजार करना होगा। वैसे शहर जहां किराया नियंत्रण है वहां मुनाफा बहुत कम होता है। उदाहरणस्वरुप मुम्बई में वर्तमान काश्तकारी कानून की वजह से किराया आज भी 1947 वाले स्तर पर ही रह गया है और यह हुआ है महाराष्ट्र किराया कानून 1999 की वजह से जोकि बोम्बे किराया नियंत्रण अधिनियम का ही हिस्सा है। दिल्ली में भी किराया नियंत्रण कानून है। हालांकि जमीनी सच्चाई इससे थोड़ी भिन्न है। अब जबकि देश वर्ष 2012 में प्रवेश कर चुका है और कई राज्य सरकारें अपनी काश्तकारी कानून में सुधार की पहल कर रही हैं। यह आशा की जा सकती है कि भारत में आवासीय बाजार आने वाले वर्षों में तेजी से बढ़ेगा और देश में कम कीमतों में ज्यादा सुविधाप्रद मकान बनेंगे और आम जनता को अपने सपने के घर को खरीदने के लिए बहुत ज्यादा जेब ढीली नहीं करनी पड़ेगी।

रहना नहीं देश बिराना जी

–डॉ. अमर सिंह सचान, राजभाषा अधिकारी

मैं एक राज की बात यह बताना चाहता हूं कि मैंने पहले ही यह तय कर लिया है कि इस नए वर्ष 2012 में पहले दिन से ही लिखना शुरू करूंगा, क्योंकि इस साल की शुरूआत रविवार के दिन से हो रही है और इस दिन सुबह–सुबह "हैपी न्यू ईयर" कहने वालों की भीड़ नहीं होगी और न ही जल्दी–जल्दी तैयार होकर आफिस जाने की जल्दबाजी होगी। अपनी इसी वचनबद्धता को निभाने के लिए मैंने सारी तैयारी कर रखी थी और इसी कारण नियमानुसार प्रातः उठकर 'मार्निंग वॉक' पर गया और वापस आकर चाय पीने के बाद लिखने का मूड बनाने लगा।

अभी कल्पना के घोड़े दौड़ाते हुए कुछ पल ही गुजरे थे। कलम ने कुछ लिखना भी न शुरू किया था, क्योंकि अनुभव और विचारों का छोर खोज रहा था। तभी मैंने देखा कि मेरे घर के आगे की बाउंड्री के मेन गेट के ठीक सामने कोलोनी के ही एक सज्जन मि. शर्मा अपने कुत्ते को टहलाते–टहलाते आकर ठहर गए और उनके कुत्ते ने ठीक गेट के बीचोबीच अपना पेट हल्का कर दिया। मैंने तेजी से चलकर उन्हें ललकारा– "मि. शर्मा, यह क्या हो रहा है?आपको शर्म आनी चाहिए। कुत्ता तो पाल लिया, पर इतनी भी तमीज नहीं है कि कुत्ते को कहां और किस जगह पर हल्का करने के लिए ले जाएं।"

मि. शर्मा निहायत बेशर्मी से बोले– "अरे भई, इसमें गुस्सा होने की क्या बात है। यह बेचारा बेजुबान पशु ही तो है। इसे क्या पता कि यह आपके घर का गेट है। कोई बात नहीं मैं इसके मल पर मिट्टी डाल दूंगा।"

मैंने कहा, "मि. शर्मा, आप शर्म करने की बजाय बेशर्मी से मुझे सफाई दे रहे हैं कि बेचारा बेजुबान पशु है। चलो मान लेता हूं कि आपका कुत्ता बेजुबान पशु है। लेकिन आप तो कुत्ते नहीं है या फिर कुत्ता पालते–पालते आप भी कुत्ते बन गए हैं और किसी के दरवाजे के सामने पोट्टी कराने पहुंच जाते हैं।"

वे थोड़ा मुस्कुराते हुए बोले, "अरे साहब, आप तो नए साल के पहले दिन ही झगड़ा करने पर उतारू हो रहे हैं। कम से कम साल की शुरूआत तो खराब न करिए।"

मेरा क्रोध कम न हुआ, मैं उसी वेग में बोला, "नया साल तो आपने मेरा खराब कर दिया, साल के पहले दिन का शुभारंभ ही मेन गेट पर कुत्ते की पोट्टी से हो रहा है? और ऊपर से आप साल खराब होने की बात कर रहे हैं।"

शर्मा जी व मेरे बीच इस वाद–विवाद को चलते देखकर कई पड़ोसी इकट्ठे होने लगे। मेरा गुस्सा कम नहीं हो रहा था। मैं दूसरों को सुनाते हुए बोला– "मि. शर्मा अगर आप अमेरिका में होते तो आपको तगड़ी पेनाल्टी भी भरनी पड़ती और आपको अपने कुत्ते की पोट्टी भी उठानी पड़ती।"

इतनी देर में पड़ोसी बीच–बचाव की मुद्रा में आ गए। लोगों ने पूछा कि भाई ऐसा क्या हो गया जो आप सुबह–सुबह, वह भी साल के पहले दिन मि. शर्मा पर इतना चिल्ला रहे हैं। मैंने लोगों को कुत्ते की पोट्टी दिखाते हुए बताया कि मि. शर्मा ने जान बूझकर मेरे घर के ठीक सामने गेट के बीचोंबीच कुत्ते की पोट्टी करा दी है। क्या इन्हें ऐसा करना शोभा देता है।

लोगों ने जब शर्मा जी से कहा कि भाई शर्मा जी यह तो बड़ी गलत बात है। ऐसी हरकत तो शरारती बच्चे ही कर सकते हैं। सचमुच आप जैसे व्यक्ति से ऐसी उम्मीद नहीं थी।

शर्मा जी बोले, "भाई आप लोग ठीक कह रहे हैं। पर मेरी बात तो सुनिए। दरअसल मेरे किसी मित्र का मोबाइल फोन आ गया और मैं बातचीत एवं शुभकामनाओं में इतना व्यस्त हो गया कि मुझे ध्यान ही नहीं रहा कि कुत्ते का पट्टा मेरे हाथ में है और वह क्या कर रहा है। इसीलिए भाई साहब के गुस्सा होने और डांट लगाने पर भी मैं ज्यादा कुछ नहीं कह सका। मैं अभी घर जाता हूं और नहाने से पहले मैं स्वयं आकर, इसे एक तरफ हटा दूंगा या कहीं और फेंक दूंगा।" मैंने कहा–"मुझे भी गुस्सा इस बात पर आया कि आप जैसा पढ़ा लिखा नागरिक ऐसा कैसे कर सकता है और उस पर आप कह रहे थे कि कुत्ता एक बेजुबान पशु है।"

शर्मा जी बोले, "अचानक आपकी नाराजगी देखकर, मैं भी बात टालने की कोशिश कर रहा था, खैर अब आप चिंता न करें। मैं अपनी गलती के लिए आपसे माफी मांगता हूं।"

शर्मा जी की बात खत्म हुई तभी उनका लड़का आ पहुंचा वह शर्मा के हाथ से कुत्ते को लेकर चल पड़ा तो अन्य लोगों ने कहा कि बेटे इसकी पोट्टी पर मिट्टी डाल दो और बाद में वापस आकर फावड़े या झाड़ू से इसे एक तरफ हटा जाना।

तभी एक पड़ोसी वर्मा जी बोले, "अरे छोड़िए साहब, यह तो सब होता ही रहेगा। चलिए नए साल के पहले दिन हंसी–खुशी से मिलकर चाय पीते हैं। आइए आप सभी लोग मेरे घर चलिए।"

बात घूम फिरकर फिर वहीं आ गई। एक साहब बोले, आप सही कह रहे थे। अरे साहब अमेरिका में तो कुत्ता पालना भी एक बड़ा मंहगा शौक है। हमारे एक रिश्तेदार अभी–अभी अमेरिका से अपने बेटे के पास से वापस लौटे हैं। वे बता रहे थे कि आप वहां इंडिया की तरह कुत्तों को पार्क में टहलाने नहीं ले जा सकते हैं। वहां के लोग जब कुत्ते को घुमाने ले जाते हैं तब अपने साथ एक थैली और खुरपी भी ले जाते हैं ताकि जब भी उनका कुत्ता पोट्टी करे तो तुरंत उठाकर उसमें रख सकें। अगर वे ऐसा नहीं करते तो तुरंत पुलिस आकर पचास या सौ डालर का फाइन कर देती है।

दूसरे साहब बोले, "अरे हां, बिल्कुल सही बताया आपने, हमारे साढू भाई भी अपने बेटे–बहू के पास गए थे, उन्होंने भी यही बात कही थी। बोले वहां की साफ–सफाई तो देखते ही बनती है। क्या मजाल जो पार्क या सड़क पर कूड़ा मिल जाए। वहां अपने देश की तरह कोई आदमी यूं कहीं भी कूड़ा नहीं फेंक सकता। कूड़े दान में ही कूड़ा डालना होता है।

भाई मेरे सादू भाई तो कह रहे थे, वहां आपको हाइवे पर भी लेन में और निर्धारित स्पीड पर चलना होता है, नहीं तो तुंरत पुलिस चालान ठोक देती है। आप यूं ही बीच सड़क पर गाड़ी खड़ी करके किसी की प्रतीक्षा नहीं कर सकते। वहां पर जेबरा क्रांसिंग पर सभी गाड़ियों का रूकना अनिवार्य है, यह नहीं कि लोग पैदल सड़क क्रास कर रहे हैं और आप गाड़ी चलाते हुए निकल गए। वे तो बता रहे थे कि वहां यदि पैदल चलने वाला बिना हरी बत्ती के सड़क पार करे तो उसे भी पुलिस जुर्माना लगा देती है। अरे भाई और तो और वहां खुलेआम हाईवेज़ (सड़क) के किनारे शौच करना तो दूर अगर आप मूत्र विर्सजन करते हैं तो तुरंत पुलिस आकर आप पर जुर्माना लगा देती है। वहां की निगरानी एवं पुलिस व्यवस्था इतनी सक्षम एवं कौशलपूर्ण है कि आपको पता भी नहीं चलेगा और वह कुछ ही मिनटों में उपस्थित हो जाती हैं। वहां के पुलिस वाले की गाड़ी यानि की पीसीआर वैन में ही कैमरा, कंप्युटर, इंटरनेट एवं अन्य सारी सुविधाएं होती है। वह तुरंत आपका नाम पता पूछकर चालान कर देती है। कोई गलत बताता है तो तुरंत हाथ की अंगुलियों एवं आंख की स्कैन के मेल से पकड़ में आ जाता है।

सच पूछा जाए तो वे इस दिशा में हमसे 50 साल आगे चल रहे हैं।एक साहब हंस कर बोले,"भाई हम उनसे 50 साल पीछे हों या वे हमसे आगे, पर अपना देश तो अपना देश ही होता है। वैसे भईया सही मायनों में आजादी का फायदा तो हमीं लोग उठा रहे हैं। अब देखिए न, जिसका जहां जी चाहता है, वहीं से वह सड़क पार कर लेता है। जब चाहे तब वह सड़क के किनारे कहीं भी सू–सू कर लेता है। यहां हर गाड़ी मोटर साइकिल वाला धड़ल्ले से रेड लाइट जंप करता निकल जाता है। रेड लाइट के पास बने जेब्रा क्रासिंग्स पर शान के साथ गाड़ियां खड़ी होती हैं। पैदल वालों को तो कोई इंसान ही नहीं समझता।

एक दूसरे पड़ोसी बोले, "अरे भाई साहब, आप बिल्कुल ठीक कहते हैं। असली आजादी का मजा तो हम लोग ही उठा रहे हैं। हमारे देश में कानून तो सिर्फ किताबों की चीज है। असल जिंदगी में तो कोई उनका पालन ही नहीं करता। अब चाहे नेता की बात करें या चपरासी की, हर जगह भ्रष्टाचार का बोलबाला है। आज हाल तो यह है कि न कोई पार्टी साफ सुथरी है और न कोई नेता। यूं कहने को तो दो चार नेता साफ–सुथरे और ईमानदार भी दिख जाते हैं, पर वे अपनी पार्टी की गलत नीतियों का समर्थन करते हैं और उनके साथ कंधा से कंधा मिलाकर खड़े होते हैं।

शर्मा जी बोले, "अरे भाई हम सिर्फ आजाद ही नहीं है, बल्कि बहुत हिम्मती एवं दुस्साहसी भी हैं। आज लोग न सिर्फ तीव्र वाहनों के चलते सड़क पार करने का साहस दिखाते हैं, बल्कि चलती बस एवं ट्रेनों में दौड़कर चढ़ना शौक एवं शगल बन चुका है। कारों को चलाने के दौरान मोबाइल पर बात करने की बात तो छोड़िए, यहां दो पहिया वाहनों में बैठे लोग अद्भुत संतुलन का परिचय देते हुए मोबाइल पर बात करते हुए गाड़ी चला रहे होते हैं।

"यही नहीं हमारे देश के कारखानों एवं फैक्टरीज में पर्याप्त सुरक्षा के उपकरण तक नहीं होते हैं। यहां तक कि जोखिम युक्त कारखानों में पर्याप्त गमबूट एवं हाथों के दस्तानें तक नहीं उपलब्ध कराये जाते हैं। यह बात न केवल निजी क्षेत्र में देखी जा सकती है, बल्कि सरकारी क्षेत्रों में भी यह तस्वीर देखने को मिल सकती है। आप अक्सर देखते और सुनते होंगे कि सीवर की सफाई के दौरान कितने ही कामगार घायल या मौत के शिकार हो गए।

मैंने कहा, "हां आप लोग बिल्कुल ठीक कहते हैं। हम बिल्कुल आजादी से जी रहे हैं। इसीलिए इस आजादी की कीमत चुकाते हैं। तभी तो सीवर की सफाई हो या कारखानों की बात। सभी जगह पर हर साल लाखों लोग अपंग एवं अपाहिज बनते हैं और यहां तक कि अपनी जान भी गंवा बैठते हैं। हम बेधड़क कहीं से भी सड़क पार करते हैं या बेझिझक ट्रैफिक नियमों की धज्जियां उड़ाते हुए मोबाइल पर बात करते हैं या गतिसीमा का पालन न करते हुए गाड़ी चलाते हैं। पर क्या पता है कि हमारी इस आजादी की कीमत क्या है? सड़क हादसों में मरने वाले लोगों की सूची में भारत नंबर एक पर है।

एक साहब हंसकर बोले– "अरे साहब अपनी जनसंख्या भी तो दो नंबर पर है, चलो यहां पर तो हम पहले नंबर पर आ गए।" वे साहब ऐसे बोल रहे थे जैसे हम इंसान की मौतों की नहीं बल्कि किक्रेट में रनों की गिनती कर रहे हों। वे आगे हंसते हुए बोले, "देखिए साहब! अब आजादी का मजा उठाएंगे तो उसके बदले कुछ क्षति तो उठानी ही पड़ेगी। हां यह बात जरूर कहूंगा कि हम सबको अपनी भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को देखना व समझना चाहिए और फिर उसी के अनुरूप नियम एवं कानून बनाने एवं उनका पालन सुनिश्चत करना चाहिए।"

एक साहब बोले, "आप ने बिल्कुल सही बात कही है, हम आजादी के नाम पर पश्चिमी सभ्यता को आंख मींचकर अपना रहे हैं यहां तक कि हमने कानून एवं संविधान भी उन्हीं की नकल पर बना लिया है। पर क्या हम उनके अनुरूप खुद को ढाल पाए हैं। जब हम पुलिस एवं कानून पर जरूरत से ज्यादा निर्भर हो जाते हैं या कानून एवं पुलिस घर, परिवार एवं समाज की जिम्मेदारियों को अपने कंधे पर उठाने की कोशिश करती है तो उसके दुष्परिणाम बड़े घातक होते हैं।"

'आज हमारे समाज ने कानून की इस दखलंदाजी के कारण अपनी जिम्मेदारी की बांह समेट ली है। इसका एक कारण जहां सरकारी कानूनी (दखल) का डर है, वहीं दूसरी ओर पश्चिमी संस्कृति एवं सभ्यता का बढ़ता प्रभाव है क्योंकि आज हम, हमारी शिक्षा पद्धति एवं हमारी मीडिया उसी पश्चिमी चश्में से सब कुछ देखती है। आज पड़ोसी के घर क्या हो रहा है, हमें पता नहीं होता। धीरे–धीरे हमारे बीच से सामुदायिकता का प्रभाव समाप्त हो रहा है। भाईचारा घट रहा है। इसीलिए पड़ोसी का लड़का या लड़की कुछ भी गलत करें तो हम टोका–टाकी नहीं करते, क्योंकि पड़ोसी की सोच भी बदल चुकी है और वह इसे अनावश्यक दखलंदाजी समझता है। जबकि आज से तीन दशक पहले तक सामाजिक दायित्व के चलते कोई भी व्यक्ति किसी गलत काम को देखकर टोकता था और उसे रोकने का प्रयास करता था। फिर चाहे वह पड़ोसी के घर का हो या पड़ोस के गांव या मुहल्ले या कालोनी की ही बात क्यों न हो। उस समय लोग यही कहते थे, आपने ठीक किया जो इसे गलत काम के लिए रोका। यदि जरूरत पड़े तो आप इसे अपना ही बच्चा समझकर डांट सकते हैं या धमका सकते हैं। पर अब वह बात सिरे से गायब है। यदि कभी कभार कोई करीबी परिवार का सदस्य टोका–टाकी कर भी देता हैं, तो उस बच्चे का जवाब होता है कि क्या मैं आपकी कमाई उड़ा रहा हूं। आप नाहक क्यों परेशान हैं। यही नहीं बल्कि उस बच्चे के मां–बाप भी अपने रिश्तेदार या पड़ोसी से लड़ने पहुंच जाते हैं कि आपने मेरे बच्चे को ऐसा क्यों कहा।"

"सभी लोग एकमत से मेरी बात से सहमत थे। मैंने बात जारी रखते हुए कहा, "समाज के मूल्यों में तेजी से गिरावट आ रही है। कारण चाहे कुछ भी हों, हम तेजी से संयुक्त परिवार से एकल परिवार की ओर बढ़ चुके हैं। आज बच्चे की शादी हुई नहीं कि वह अलग घर बसाना चाहता है। वह पूरी आजादी से रहने के लिए अपने मां–बाप के प्रति अपनी जिम्मेदारी को भी भूल रहे हैं। आज की पीढ़ी सबकुछ पैसे को मानती है। वह अपने मां–बाप को खर्च के लिए पैसे भेजकर इतिश्री मान लेते हैं। क्या पैसा पारिवारिक प्रेम, सौहार्द एवं अपनेपन की जगह ले सकता है। आज अमेरिकी एवं यूरोपियन देश एक स्वर में भारतीय संयुक्त परिवार एवं मां–बाप के प्रति देखभाल को सर्वोत्तम बता रहे हैं; क्योंकि एक संयुक्त परिवार में एक बच्चे का समग्र विकास होता है। वह अपने मां–बाप के साथ–साथ अपने दादा–दादी, नाना–नानी, मामा–मामी एवं बुआ व मौसी के साथ भाई बहिनों के प्रेम का मूल्य समझता है। उनसे संरक्षण पाता है और अपने से छोटो को संरक्षण देने की भावना रखता है तथा अपने से बड़ों को आदर व सम्मान देने का भाव रखता है।

हमारे एक पड़ोसी बोले, अजी हम तो अपने साढू भाई से पूरी तरह सहमत हैं। वे तो अमरीका भी दो बार अपने बच्चे के पास महीनों रह चुके हैं। वे वहां की शासन व्यवस्था, कानून व्यवस्था और शहरों की

साफ–सफाई भी बहुत पसंद करते हैं। पर वे कहते हैं कि भाई जो बात अपने देश में है, वह बात वहां नहीं। वहां लोगों को अपने काम से काम रहता है, किसी के पास अपने रिश्तों को निभाने का समय नहीं है। वे तो कहते हैं कि यहां दिल्ली, मुंबई जैसे महानगरों में भी लोग अपनी भारतीयता से दूर हट रहे हैं। भाई मैं तो रिटायरमेंट के बाद अपने होम टाउन चला जाऊंगा। हमारे देश के गांव–देहात में भी नई बयार का असर पहुंच चुका है, तब भी लोग अभी भी परस्पर रिश्तों की कद्र करते हैं। शादी–विवाह के अवसरों पर इकट्ठे होते हैं। अभी भी लोग एक–दूसरे के सुख–दुख के साझी हैं। यदि किसी को कोई बीमारी / परेशानी होती है तो बहुत सारे लोग सहायता व सांत्वना देने आ जाते हैं।"

तभी उनकी बात बीच में काटते हुए एक साहब बोले, "भाई आपकी यह बात तो सौ टका सही है। आपको पता है न जब यहीं पड़ोस में हार्ट अटैक से रात दस बजे करीब मि. जोशी की मौत हो गई तो सारी रात उनकी घरवाली रोती रही और बच्चे थोड़ी देर रोना–धोना कर के सो गए। भाई जोशी की घरवाली ने न तो अपने पड़ोसियों को बताया और न ही पड़ोसी उसके घर यह पता लगाने गए कि मिसेज जोशी क्यों रो रही है। लोगों ने तो यही समझा कि शायद जोशी आज भी पीकर आया होगा और घरवाली से मारपीट की होगी।

"अरे हां, यही बात तो मेरे साढू भाई कह रहे थे" उन साहब ने अपनी बात पुनः शुरू करते हुए कहा– "इस विराने और अनजान शहर में मर गया तो मेरी मिट्टी भी ठीक से ठिकाने नहीं लग पाएगी। वहां अपने गांव–घर में कम से कम सुख–दुख में चार लोग तो पास होंगे। यहां शहर से तो साल दो साल में एक आध बार ही दो चार दिन के लिए गांव जा पाते हैं। पर वहां रहते हुए कम से कम मौके–बे मौके अपने रिश्तेदारों से तो मिल सकूंगा। वे कहते हैं भाई मुझे इस बिराने यानि पराये व अनजान शहर में नहीं रहना। भाई मैं भी इस बात से सहमत हूं। इन शहरों का जीवन बड़ा ही नीरस और रिश्तों से हीन होता जा रहा है। मैं भी होम टाउन में जाकर रहूंगा। मैं तो सच कहता हूं रहना नहीं देश बिराना जी।

आपदा प्रबंधन और हम

– संजीव कुमार सिंह,
सहायक प्रबंधक

पिछले कई दिनों तक देशभर में अनेक राज्यों एवं महानगरों में तमाम स्थानों पर स्थानीय तौर पर ऐसे अभ्यास किए गए थे ताकि आपदा प्रबंधन को सफल बनाया जाए। लेकिन जिस तरह से यह अभ्यास किए गए उससे न तो किसी वास्तविक खतरे से लड़ने का संकल्प दिखता था, न ही आम जनता इसे कोई विशेष गंभीर काम मान रही है। किसी कल्पित स्थिति और वास्तविक आपदा में बहुत बड़ा अंतर साफ दिख रहा था। फिर भी ऐसे अभ्यास आवश्यक होते हैं क्योंकि आपदाएं पूछ कर नहीं आतीं। वे ऐसे मेहमानों की तरह होती हैं जिनके आने की हमें उम्मीद ही नहीं होती। वे सही अर्थों में अतिथि होती हैं प्रायः वे द्वार पर आ जाती हैं और हम थोड़ी देर के लिए भौंचक्के से रह जाते हैं और हमारे मुंह से निकल पड़ता है, 'हे भगवान यह क्या हुआ!' फिर आपाधापी, भागदौड़ आरंभ होती है, खाना तैयार नहीं, सब्जी नहीं, चाय समाप्त हो गई है आदि। लेकिन आपदा तैयारी के लिए समय ही नहीं देती, बस आ जाती है और लपेट से बचने के लिए समय ही नहीं देती, बस आ जाती है और लपेट लेती है।

हमारे देश में हर प्रकार ही आपदाएं आती ही रहती हैं, प्राकृतिक और मानवजनित दोनों। हमारा देश ही इतना बड़ा और भौगोलिक स्तर पर अत्यंत विविधतापूर्ण है कि हमारी आपदाएं भी विविध होती हैं। कहीं पानी अधिक बरसता है और भयंकर बाढ़ आती है तो कहीं पानी बरसता ही नहीं तो सूखा पड़ता है। भूकंप भी हमारे लिए अनजानी आपदा नहीं है। महामारी, अग्निकांड, दंगा, रेल दुर्घटना तो आए दिन की बातें हैं। आतंकवादियों द्वारा नियोजित दुघर्टनाएं भी आज की नई आपदा बन चुकी है जो हर रोज विश्व के किसी कोने में कहीं न कहीं घटती रहती है। दुर्भाग्य की बात है कि जब भी कभी कोई आपदा देश के किसी क्षेत्र को घेरती है तो हम अक्सर सोए हुए पाए जाते हैं। हमारे हाथ–पांव फूल जाते हैं या हमारे पास साधन ही नहीं होते कि सफलतापूर्वक सामना कर पाएं।

सामान्यतया यह बिल्कुल सच है कि आपदाएं पूछ कर नहीं आतीं, लेकिन यह पूरा सच नहीं है क्योंकि विकास के नाम पर बहुत–सी आपदाओं के कारण हम स्वयं ही बनाते हैं। नदियां बरसात में हर साल किनारा लांघ जाती है, यह हमारा हजारों सालों का अनुभव है, लेकिन हम अगर आज़ादी के साठ वर्षों में

भी पानी के प्रबंध की कोई कारगर रणनीति नहीं बना पाए तो यह हमारा दोष है। जंगलों के लगातार कटने से नंगी धरती, पानी को नहीं संभाल पाती और बरसात का सारा पानी तेजी से बाढ़ के रूप में निकल जाता है इस पानी के निकल जाने के बाद भयंकर सूखा पड़ता है जिसके दोषी हम ही हैं। हम बहुत हद तक यह भी जानते हैं कि सूखा किस क्षेत्र में आने का खतरा है। फिर भी अगर नहीं रोक पाते या सूखा पड़ने पर उचित प्रबंध नहीं कर पाते तो किसी और को कसूरवार नहीं ठहरा सकते। लेकिन प्राकृतिक आपदाओं के बारे में भी पूरी तरह यह नहीं कहा जा सकता कि वे कोई चेतावनी नहीं देतीं, वे समय रहते दस्तक नहीं देतीं। भूकंप ही ऐसी आपदा है जिसके बारे में आज हम पहले से कोई भविष्यवाणी नहीं कर सकते। अभी भूगर्भ विज्ञान ने इतनी प्रगति नहीं की है कि हम बता सकें कि किसी क्षेत्र में कब भूकंप आएगा और वह कितनी तीव्रता का होगा। लेकिन हम इतना जान पाए हैं कि हमारे देश में किस–किस क्षेत्र में भूकंप की आशंका है। इस तरह का मानचित्र हमारे पास है जिसमें हमने देश को भूकंप की संभावनाओं की दृष्टि से विभाजित किया है। लेकिन क्या हमने इन संवेदनशील इलाकों में इस बात का प्रबंध भी किया है कि भूकंप आने की स्थिति में विनाश कम से कम हो?दिल्ली भी भूकंप की दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्र है। यहां पर किए गए अभ्यास में इस बात का भी ध्यान रखा गया था कि अगर दिल्ली में सात अंक की तीव्रता का भूकंप आए तो क्या करें। लेकिन क्या इस बात का आकलन सरकार ने किया है कि अगर दिल्ली में आठ अंक की या

अधिक तीव्रता का भूकंप आए तो दिल्ली के कितने बहुमंजिले भवन धराशायी हो जाएंगे और उनसे होने वाली, जनहानि कितनी होगी? बहुमंजिले भवन ही नहीं, दिल्ली महानगर के पुराने क्षेत्र की तंग गलियों वाली बस्तियां भी कितनी सुरक्षित हैं, यह आकलन भी कहां है?

इस मामले में जितनी सरकारी मशीनरी उदासीन है, उससे ज्यादा कहीं हमारे नेता एवं उच्चाधिकारीगण उदासीन हैं। दिल्ली में 1650 से अधिक अनधिकृत कालोनियां है और लगभग 100 से अधिक गांव हैं जहां लाल डोरा के नाम से अवैध मकानों का निर्माण बिना किसी तय मानदंड के अनुपालन के होता है। दिल्ली के अधिकांश गांवों एवं अवैध कालोनियों में बहुमंजिली इमारतें साधारण दीवारों पर बनी होती हैं। साधारण आरसीसी पिलर पर छह–सात मंजिलें मकान आसानी से देखा जा सकता है। जो छह या सात रिक्टर स्केल के भूकंप पर ही धराशायी हो सकते हैं। यदि दैवयोग से कभी भूकंप आ जाता है तो इन गांवों एवं अनियमित कालोनियों में होने वाली तबाही अवर्णनीय होगी। इन गांवों एवं कालोनियों में दस बारह फुट की गलियां भी नहीं है, कहीं–कहीं पर तो सिर्फ 5 या 6 फुट चौड़ी गलियां है। मकानों के छज्जे आपस में टकरा रहे हैं। किसी भी आपदा में एंबुलेंस या अग्निशमन की गाड़ियों का प्रवेश करना तो दूर यहां थ्री व्हीलर एवं साइकिल रिक्शे घुसना भी असंभव होगा।

इस सबके बावजूद वोट की राजनीति के चलते तथा प्रजातंत्र की दुहाई देकर सभी पार्टियां, दल एवं सभी सरकारें आंख बंद किए बैठी हैं। आसन्न खतरों की विभीषिका को जानते हुए भी मौन हैं और शुतुरमुर्ग की तरह खतरे से बचाव खोजने की बजाए, बालू के ढेर में सिर घुसाकर बैठे हैं। किसी भी सरकार ने दूरदर्शिता को दिखाते हुए आसन्न परिस्थितियों से बचाव के बारे में सोचने एवं आकलन करने की दिशा में काम नहीं किया। बस दिखावे के तौर पर कुछ बजट रखकर अभ्यास जैसी रस्मी कवायदें की जा रही हैं।

भारत जैसे देश में जब तक महानगरों के विकास की नीति में ही व्यापक बदलाव नहीं आता तब तक उस कवायद का कोई लाभ नहीं होगा। विकास के नाम पर प्राकृतिक चेतावनियों को अनदेखा करना न तो वैज्ञानिक है और न सार्वजनकि हित में है। विकास मानव की सुख सुविधा के लिए आवश्यक है लेकिन आर्थिक विकास का प्राकृतिक वस्तुस्थितियों से मेल रखना भी आवश्यक है; और मानव के ही हित में है। विकास के नाम पर नदियों की दुर्दशा या जंगलों का ह्रास, महानगरों का बेतरतीब फैलाव तो हो रहा है पर इसके विकल्प पर कोई विचार तक नहीं किया गया कि इसकी क्षतिपूर्ति कैसे हो । साफ है कि प्राकृतिक आपदाओं को अधिक विनाशकारी बनाने में भी मानवजनित कारणों का हाथ होता है।

प्रकृति तो बहुत धीमी गति से काम करती है; क्योंकि उसके कार्यक्रम युगों के होते हैं जबकि मानव सब कुछ जल्दी–जल्दी करना चाहता है। उसके कार्यक्रम शायद ही कभी सौ साल के लिए होते हों। अक्सर कुछ दशकों के लिए होते हैं। जब हम कहीं परमाणु संयंत्र लगाते हैं, भले ही हमारा उद्देश्य बिजली बनाना ही क्यों न हो, हम एक आपदा की संभावना को जन्म देते हैं। आपदा सामान्य बिजलीघर से भी हो सकती है लेकिन सामान्य दुर्घटना और आपदा में अंतर तो मात्रा और तीव्रता का होता है। परमाणु संयंत्र में विस्फोट एक भयंकर आपदा का कारण बन सकता है। जब लोग परमाणु संयंत्र लगाने का विरोध करते हैं तो उनके दिमाग में रूस के चेर्नोबिल और हाल ही में जापान के क्षतिग्रस्त फुकुशिमा संयंत्र के उदाहरण होते हैं। इसलिए आपदा प्रबंधन की उपयोगिता तभी होगी जब दूरगामी प्राकृतिक बदलावों की अनदेखी न करें और विकास के नाम पर ऐसी स्थितियां न पैदा करें जो आपदाओं को निमंत्रण देती हों।

पहाड़ी प्रदेशों में पर्यटन एवं विकास के नाम पर जंगलों को काटकर कंक्रीट के जंगल खड़ा करना भी एक प्राकृतिक असंतुलन की दिशा में बढ़ता कदम है। धीरे–धीरे इन बदलावों के कुपरिणाम भी दिखने लगे हैं। हमें जल्द ही संतुलित एवं संयमित विकास को अपनाने की दिशा में विचार करना होगा ताकि आने वाली पीढ़ियों को एक सुरक्षित भविष्य एवं संसाधित पृथ्वी सौंप सकें।

भारत में तीव्र गति यातायात के साधनों की अनिवार्यता

– नितिन अग्रवाल, सहायक प्रबंधक

हम सभी जानते हैं कि मानव की मूल आवश्यकता रोटी, कपड़ा और मकान है। लेकिन इन तीनों को पाने के लिए इंसान के पास मुद्रा यानि कि धन होना जरूरी है। यह धन अच्छी कृषि कारोबार या रोजगार व नौकरी से ही प्राप्त हो सकता है। देश की आजादी के बाद से भारत की सारी अर्थव्यवस्था शहर केन्द्रित होती चली गई। हालांकि हम भारत को आज भी कृषि प्रधान देश कहते हैं लेकिन कृषि के क्षेत्र में अपेक्षित प्रगति नहीं की जा सकी। परिणाम स्वरूप शहरों की ओर पलायन बढ़ने लगा।

शहर सदा से मनुष्य के आकर्षण का केन्द्र रहे हैं, लेकिन अब ये ग्रोथ के इंजन बन चुके हैं। यहां की 5 फीसदी जमीन पर दुनिया का आधा उत्पादन हो रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों के मुकाबले शहरों में लोगों की आय और वस्तुओं का अधिक उपभोग आकर्षण का काम करता है। आज समय कि मांग है कि अगर शहरों को गांवों से तीव्रगामी रेल नेटवर्क या अन्य तीव्रगति के यातायात साधनों के जरिये जोड़ दिया जाए तो इस भीड़ को कम किया जा सकता है। ऐसा होने पर लोग गांव छोड़े बिना भी अपनी आय बढ़ा सकेंगे। इसके अलावा गांव से शहर की खाद्यान्न, फल–फूल, साग–भाजी की आवाजाही बढ़ेगी, जिसका असर गांव के कृषि पर निर्भर लोगों की आय बढ़ाने पर होगा और इस प्रकार से पूरे देश की समूची अर्थव्यवस्था पर पड़ेगा।

आज के दौर में तीव्र संचार साधनों ने वैश्विक–देशों की दूरी को घटा दिया है और उदारीकरण के इस दौर में शहरों के फैलाव ने नीति–निर्माताओं की चिंता बढ़ा दी है। हर शहर या महानगर अपने आसपास की उपजाऊ जमीन को निगल रहा है। अब तो बड़े शहर अथवा महानगर आपस में मिलकर विशाल व्यावसायिक क्षेत्र बना रहे हैं। जैसे भारत में दिल्ली के इर्दगिर्द एनसीआर, जापान में नगोया ओसका–क्योटो और चीन में हांगकांग, शेनजेन, ग्वांझाऊ। ये विशाल व्यावसायिक क्षेत्र संपदा एवं समृद्धि के अगुवा बनकर उभरे हैं। उदाहरण के लिए चोटी के 25 शहरों के हिस्से में दुनिया की आधी संपत्ति आती है। भारत और चीन की भी आधी संपदा इनके पांच बड़े महानगरों में ही स्थित है। लेकिन जिस गति से शहरों में भीड़ बढ़ रही है उस गति से यहां सुविधाओं में इजाफा नहीं हो रहा है। आज शहरों में इन्फ्रास्ट्रक्चर की भारी कमी हो रही है, जिसमें पेय जल, जल–मल निकासी, यातायात के अल्प साधन, तेजी से बढ़ते वाहन एवं बढ़ता प्रदूषण, भारी आवास की कमी, स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी जैसी अनेक समस्याएं खड़ी हो रही है। यही कारण है कि शहरों की पहचान समस्या स्थलों के रूप में की जाने लगी है।

अ । जहालत यह है कि एक ओर महानगरों के दड़बेनुमा कमरों में भीड़ बढ़ती जा रही है, दूसरी ओर गांवों–कस्बों के लाखों घरों में ताले जड़े हैं। बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड तथा राजस्थान व केरल के कई गांवों में केवल औरतें, बच्चें व बूढ़े बचे हैं, युवा मर्द कमाई के लिए शहरों में पलायन कर चुके हैं। ऐसे में यदि गांवों व कस्बों और शहरों के बीच आवाजाही को तेज, सस्ता और आसान बना दिया जाए तो न सिर्फ शहरों में भीड़ कम होगी; बल्कि देश का समावेशी विकास भी होगा। विश्व बैंक ने अपने आकलन में माना है कि ग्रामीण और शहरी इलाकों में यातायात की व्यवस्था जितनी सुगम होगी, अर्थव्यवस्था को उतना ही अधिक फायदा होगा। इसका एक नमूना जापान में देखा जा सकता है। यहां जापान की राजधानी टोकियो में हर रोज 80 लाख लोग आकर काम करते हैं और चले जाते हैं तो यह कमाल वहां की फर्राटेदार और वक्त की पाबंद रेल का ही है।"जहां चाह है वहां राह है" के आधार पर चलकर हाल ही के वर्षों में चीन ने भी अपने पेइचिंग एवं शंघाई जैसे महानगरों को तीव्रगति की रेलों एवं विशाल हाई वेज के द्वारा जोड़ा है और उसने दुनिया के सामने इन्फ्रास्ट्रक्चर के विकास का एक नया उदाहरण प्रस्तुत किया है।

मान लीजिए कि आप कानपुर, लखनऊ, इलाहाबाद, बरेली, हरिद्वार, देहरादून या फिर चंडीगढ़, कोटा, बनारस या अमृतसर जैसे किसी शहर में रहते हैं। रोज दिल्ली आना–जाना ऐसा ही हो, जैसे दिल्ली में ही घर से दफ्तर आना–जाना। यानि कि 300 या 400 कि.मी. का आना–जाना सिर्फ डेढ़ दो घंटे में हो जाए। अगर किसी तरह ऐसा हो जाए तो न जाने कितने लोग दिल्ली में बसने का झंझट छोड़ देंगे।

लेकिन इसके लिए कम से कम चार सौ किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से चलने वाली ट्रेनों की जरूरत पड़ेगी। 2006 में स्पेन की सीमेंस–बोलरोई गाड़ी 404 प्रति घंटा की रफ्तार दिखाई तो चीन ने उसको पछाड़ते हुए सीआरएच–3 गाड़ी चलाई जो 416 किलोमीटर की रफ्तार पर चल सकती है। जापान की बिना पहियों वाली मैगलेव रेल तो 581 किलोमीटर की रफ्तार दिखा चुकी है।

धीमी रफ्तार के साथ कई और बाधाएं भी भारतीय रेलवे को लंगड़ा बना देती है। रेलवे संरक्षा पर गठित अनिल काकोदर समिति ने अपनी रिपोर्ट में इसकी बदहाली की पुष्टि की है। रिपोर्ट के मुताबिक जगह–जगह टूट–फूट चुके रेलवे ट्रैक से लेकर असुरक्षित डिब्बों और अपनी उम्र पार कर चुके पुलों के कारण रेलवे वक्त से काफी पीछे छूट चुकी है। नई तकनीक के अभाव में पुराने ढंग के ट्रैक, कोच और वैगनों से काम चलाया जा रहा है।

फिलहाल रेलवे जिस तरह वोट बैंक की राजनीति का जरिया बनी हुई है और पिछले दस–बारह सालों से यात्री किरायों में अपेक्षित किराये भी नहीं बढ़ाए गए हैं, उससे बहुत उम्मीद नहीं बंधती। उदाहरण के लिए पिछले दस सालों में थोक मूल्य सूचकांक 300 फीसदी बढ़ा है, लेकिन रेलवे के किराए लगभग वहीं हैं। माल भाड़े से यात्री किराए की भरपाई की गलत परंपरा भी रेलवे की कंगाली का कारण बनी है। रेलवे में धन की कमी के कारण यात्रीगण की सुरक्षा खतरे में पड़ी हुई है यहां तक कि वैगन और कोचों के लिए नए कारखाने नहीं खड़े हो रहे। रेलवे स्टेशनों के नजदीक माल जमा करने और चढ़ाने–उतारने की सुविधाओं वाले लॉजिस्टिक पार्कों की कमी है। देश में कंटेनर ढुलाई भी बेहद महंगी और धीमी है। लगभग एक दशक पूर्व संकल्पित फ्रेट कोरिडोर सुस्त गति से निर्मित हो रहे हैं, जिन्हें माल भाड़े की ढुलाई हेतु तैयार करने में शायद एक दशक और लगेगा।

आज के दिन रेल यात्रियों को सफर में हर कदम पर कठिनाइयों से जूझना पड़ता है। टिकट खिड़की से लेकर मंजिल तक पहुंचने की तकलीफ त्यौहारों और गर्मी की छुट्टियों में कई गुना बढ़ जाती है। परेशानी के इस पीक सीजन में बच्चों, बुजुर्गों, बीमारों को लेकर यात्रा करना किसी दुर्गम चोटी फतेह करने जैसा होता। देश के लाखों गांवों– कस्बों को तीव्रगामी गाड़ियों से जोड़ने और रेल यात्रा को सुहाना सफर बनाने का लक्ष्य तभी हासिल होगा। जब राष्ट्रीय स्तर पर एक समग्र नीति बने। दुर्भाग्यवश, भारतीय रेल एक अरसे से जारी केन्द्र में गठबंधन राजनीति का शिकार बन चुकी है। सहयोगी दलों से बनने वाले रेल मंत्री दूरदर्शी नहीं होते और वे रेलवे के दीर्घकालिक सुधार के बजाय अपनी पार्टी और अपने प्रदेश के हितों से आगे नहीं बढ़ पाते। कमजोर राजनीतिक इच्छाशक्ति एवं धन की कमी तभी दूर की जा सकती है जब सभी दल पारदर्शिता के साथ देश की अवसंरचना एवं तीव्र गति यातायात जैसे विषयों पर चर्चा करें एवं सुयोग्य एवं दूरदर्शी कार्यपालक नियुक्त करे। दिल्ली मेट्रो रेल एवं ई श्रीधरन एक उदाहरण पेश कर चुकी है। यदि सरकार एवं

निजी क्षेत्र की भागीदारी से ऐसी दूरदर्शी, दीर्घकालिक एवं दीर्घगामी परियोजनाओं को क्रियान्वित किया जाए तथा निवेशकों को भरोसा दिलाया जाए कि देश हित में लिया गया कोई निर्णय नहीं बदला जाएगा फिर चाहे सरकार किसी भी दल या पार्टी की बने तो निश्चित ही ऐसी परियोजनाओं को क्रियान्वित किया जा सकता है एवं भारत में इन्फ्रास्ट्रक्चर, निवेश एवं उभरती अर्थव्यवस्था को तीव्रगति की पटरी पर दौड़ाया जा सकता है। इसी प्रकार यदि अच्छे राष्ट्रीय राज मार्ग बने हो जहां 150–200 किमी. की रफ्तार से गाड़ियां दौड़ाने की सुविधा हों तो लोग कारपूल या बसों/टैक्सियों या चार्टेड बसों द्वारा 100 से 200 किमी. के दायरे में रोजाना आसानी से आ जा सकते हैं। उन्हें बड़े महानगरों में ऊंची कीमत पर मकान खरीदकर मंहगी खाद्य सामग्रियां खरीदने की परेशानी नहीं उठानी पड़ेगी। इसके साथ ही गांव या कस्बे में रहने वाले को अपने गांव/कस्बे के साथ–साथ शहरों में (दोहरे) मकान नहीं बनाने पड़ेंगे।

सरकार को इस दिशा में गंभीरता से विचार करते हुए अगले 100 वर्षों की स्थिति को ध्यान में रखकर विकास की योजनाओं को बनाकर अवसंरचनाओं को तैयार करना चाहिए। गांव/कस्बों में पक्की सड़कें, पेयजल विद्युत एवं बेहतर संचार सुविधाएं उपलब्ध करानी चाहिए। जरूरत है सभी दलों/पार्टियों व सरकारों को देश के व्यापक एवं समग्र विकास के बारे में सोचने की।

''कौन कहता है आसमां में सुराख हो नहीं सकता।
बस एक पत्थर जरा तबियत से तो उछालो यारो''।।

संस्कृति ही है भारत की एकता का आधार

– श्रीमती उमा सोमदेवे, पत्नी श्री जी.एन. सोमदेवे

हमारे पूर्वजों ने मानव जीवन के कल्याण एवं स्वास्थ्य से जुड़ी बहुत सारी बातों को धर्म, संस्कृति, पूजा–पाठ, पाप–पुण्य एवं दैनिक कर्म कांडों से जोड़ दिया, ताकि लोग उन्हें किसी भी प्रकार के पाप–पुण्य के भय से अपनाते रहें और उनका उल्लंघन या उनके अनुपालन में लापरवाही न बरते। हम बचपन मे सुनते आए हैं कि कच्चा भोजन यानि कि रोटी–दाल व भात को यात्रा के दौरान (बस, रेल या अन्य वाहन में) न खाएं। क्योंकि उनके खाने से छूत लगती है। वस्तुतः यह छूत जाति प्रथा की नहीं, बल्कि संक्रामक जीवाणुओं के बारे में थी क्योंकि कच्चे भोजन में पांच छह घंटे के बाद फंगस आदि सड़न के जीवाणु पैदा होने लगते हैं, जबकि चिकनाई से बने खाद्य पदार्थों की छूट थी; क्योंकि चिकनाई से बने खाद्य पदार्थ ज्यादा समय तक टिकाऊ होते हैं।

हमारी संस्कृति में इसी तरह से किसी जीव की हत्या, फलदार वृक्षों एवं पीपल व बरगद जैसे विशाल वृक्षों को काटने पर किसी न किसी तरह के पाप बोध से जोड़ा गया था ताकि लोग उन्हें काटकर नष्ट न करें। बल्कि एक फलदार वृक्ष के लगाने पर एक पुत्र के बराबर पुण्य प्राप्त होना जोड़ा गया था। पर्यावरण हेतु पेड़ों के महत्व को बताने की जरूरत नहीं है। हमारी संस्कृति में पेड़ों की पूजा करने के पीछे का महत्व स्वतः स्पष्ट है, इसी प्रकार से मोर, सांप, चूहा, शेर, हाथी, गाय–भैंस आदि सभी पशुओं व जीवों को किसी न किसी पूजा एवं संस्कृति से जोड़कर संरक्षण प्रदान किया गया है। जो हम भारतीयों की प्रकृति एवं पर्यावरण के प्रति लगाव एवं महत्ता को स्पष्ट करती है। यह बात साफ है कि देश के सांस्कृतिक प्रतीकों और धार्मिक कर्मकांडों में व्यापक भावनात्मक लगाव के बीज छिपे हैं।

आज संपूर्ण विश्व एक संक्रमण काल से गुजर रहा है। यह माना जा रहा है कि बदलते समीकरणों के अनुसार 21वीं सदी भारत और चीन की होगी। एक अनुमान के अनुसार भारत आज विश्व की उभरती हुई आर्थिक महाशक्ति ही नहीं है, बल्कि 21वीं शताब्दी के मध्य तक भारत की जनसंख्या चीन से अधिक और इसका जीडीपी अमेरिका से अधिक हो जाएगा। पूरे विश्व में सबसे अधिक युवा जनसंख्या भारत की होगी, जबकि चीनी जनसंख्या की औसत आयु 40 से ऊपर की होगी यानी भारत का भविष्य अत्यंत संभावनापूर्ण है। इसका मुख्य आधार भारत के विशाल आकार और युवा जनसंख्या में निहित है। आज भारत विश्व की सभी प्राचीनतम सभ्यताओं में से एकमात्र जीवित सभ्यता है। भारत विश्व का एकमात्र जीवित प्रागैतिहासिक राष्ट्र है। अतीत से भविष्य तक इतने लंबे अंतराल में इतने विराट स्वरूप को भारत कैसे संरक्षित करके रख सका, यह पश्चिमी विचारकों के लिए आश्चर्य और शोध का विषय है।

भारत में एकता का सूत्र यहां की संस्कृति, धर्म और सांस्कृतिक मनोविज्ञान में इतने सुव्यवस्थित ढंग से बसा हुआ है कि सामान्य तौर पर वह नजर ही नहीं आता। भाषा की विविधता के बावजूद सांस्कृतिक एकता है। यहां आर्य, शक, हूण, कुषाण, तुर्क, मुगल एवं अंग्रेज, पुर्तगाली व फ्रांसीसी लोग बाहर से आए, किंतु बाद में यहां की संस्कृति में ही रंग गए। भारत की उदार संस्कृति ने हर संस्कृति को आत्मसात कर लिया एवं सभी भारतीय संस्कृति का अंग बन गई। भारत की एकता का मुख्य आधार आर्थिक, राजनैतिक, प्रशासनिक कारणों में निहित नहीं था। बल्कि इन आधारों पर गठित बड़े–बड़े राष्ट्रों का जीवन बहुत लंबा नहीं होता। इतिहास में अरब क्षेत्र में टर्की और मेसोपोटमिया के साम्राज्य, उत्तरी अफ्रीका में मिस्र का साम्राज्य और यूरोप में रोमन सम्राज्य आज उसी क्षेत्र में अनेक राष्ट्रों में विभाजित है। पिछली शताब्दी में ही चेकोस्लोवाकिया और सोवियत संघ का विघटन इसका प्रमुख उदाहरण है।

भारतीय संस्कृति की यह एक अदभुत विशेषता है कि आप यहां के धर्म और संस्कृति के किसी भी प्रतीक पर आस्था रखिए तो संपूर्ण भारतवर्ष से स्वतः जुड़ जाएंगे। इसे कुछ उदाहरणों के द्वारा समझा जा सकता है। जैसे यदि कोई भारतीय कहे कि वह वैष्णव है, उसकी आस्था भगवान राम में है तो उत्तर में अयोध्या से लेकर चित्रकूट होते हुए धुर दक्षिण में रामेश्वरम तक सभी स्थानों से उस व्यक्ति की आस्था स्वयं जुड़ जाएगी। यदि कोई व्यक्ति कहे कि उसकी आस्था भगवान श्रीकृष्ण में है तो उत्तर में उनकी जन्मभूमि मथुरा, पूर्व में जगन्नाथपुरी, पश्चिम में द्वारिका और दक्षिण में तिरुपति बालाजी और उत्तर–पूर्व में मणिपुर तक देश के सभी स्थानों से उसकी आस्था स्वतः जुड़ जाएगी।

यदि कोई यह कहे कि वह वैष्णव नहीं बल्कि शैव है और उसकी आस्था भगवान शंकर में है तो उत्तर में अमरनाथ, मध्य में उज्जैन के महाकाल, पश्चिम में सोमनाथ और दक्षिण में रामेश्वरम सहित द्वादश ज्योतिर्लिंगों के द्वारा भारत के हर कोने से उसकी आस्था जुड़ जाएगी। यदि कोई यह कहे कि वह शाक्त है और उसकी आस्था देवी में है तो उत्तर में वैष्णो देवी, मध्य में विंध्यवासिनी, पश्चिमी में मुंबा देवी, पूर्व में कामाख्या एवं कोलकाता में काली और

दक्षिण में कन्याकुमारी सहित देश के सभी भौगोलिक क्षेत्रों से उस व्यक्ति की आस्था अपने आप जुड़ जाएगी। भारत की संस्कृति ही नहीं; बल्कि धर्म (वैदिक) भी बड़ा उदार है। राम, कृष्ण या शिव, विष्णु, ब्रह्मा तथा आदि शक्ति को एक दूसरे से ऐसे पिरो दिया गया है कि सभी एक दूसरे से जुड़ा हुआ महसूस करते हैं।

एकता का यह सूत्र सिर्फ विचार में नहीं था। इसका क्रियात्मक स्वरूप भी अनादिकाल से दिख रहा है। कश्मीर में अमरनाथ है तो देश के चार स्थानों नासिक, उज्जैन, प्रयाग और हरिद्वार में हर तीन वर्ष के बाद कुंभ मेला होता है देश के समस्त साधु–संत और आमजन लगातार इन चारों स्थानों की यात्रा करते रहते हैं। आदि शंकराचार्य जी ने चारों कोनों पर चार मठ बनाए और वहां के शंकराचार्य बनने के लिए यह बाध्यता बनाई कि उसी क्षेत्र का व्यक्ति शंकराचार्य नहीं बनेगा। अभी नेपाल में पशुपतिनाथ मंदिर विवाद के समय यह बात प्रकाश में आई कि वहां का मुख्य पुजारी शताब्दियों से कर्नाटक का ही होता रहा है। अर्थात राजनीतिक पार्थक्य भी एकता को सांस्कृतिक सूत्र से जोड़े रखता है।

इतना ही नहीं, भारत में धर्म और संस्कृति के कर्मकांडों में भी, जिसकी आधुनिक तथाकथित बुद्धिजीवी तीव्र आलोचना करते हैं, राष्ट्रीय एकता के गहरे सूत्र हैं। पूजा करते समय जब पुरोहित आपसे हाथ में जल लेने को कहता है तो संकल्प स्वरूप यह मंत्र बोला जाता है– 'गंगे च यमुने च गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिंधु, कावेरी, जलेअस्मिन सन्निधिं कुरु'। अर्थात पूजा स्थल पर बैठे हुए आप भावना से देश की समस्त नदियों के साथ जुड़ जाते है। सांस्कृतिक विधान तो यह है कि प्रतिदिन स्नान करते समय, विशेष रूप से त्यौहारों में स्नान करते समय भी यही मंत्र बोलना चाहिए।

स्पष्ट है कि भारत की एकता के सूत्र जिन देवी–देवताओं और परंपराओं में निहित हैं, उनके कारण देश का कोई हिस्सा यदि किसी अन्य के प्रभाव में हो तो भी दूसरे हिस्से में बैठे व्यक्ति की भावना उस हिस्से से जुड़ी रहती है। भारतीय संस्कृति में निहित उदारता का ही फल है कि जरूरी नहीं कि आप पूजा मंदिर में जाकर करें। आप अपने देवता को घर में ही रख सकते हैं और घर बैठे किसी भी देवता की आराधना से आपकी आस्था सारे भारत के साथ जुड़ जाती है। आज भी भारत के किसी भी मंदिर में या घर पर बने पूजा गृह में आप सभी देवताओं की मूर्तियों को देख सकते हैं।

चिरंतन और सनातन

विश्व की कोई भी सत्ता मंदिरों, मठों और आस्था के केन्द्रों को तो नष्ट कर सकती है परंतु एक–एक व्यक्ति के घर में घुसकर उसके क्रियाकलाप को नियंत्रित नहीं कर सकती और स्नानागार में स्नान कर रहे व्यक्ति को नियंत्रित करना तो अकल्पनीय है। यही कारण रहा कि भारत में हजारों सालों के बाहरी आक्रमणों, आगमनों एवं धार्मिक प्रचारों की आंधियों को बखूबी झेला और अपनी आस्था से नहीं डिगा। धर्मान्ध आक्रमणकारियों ने मंदिरों, मठों एवं पूजा स्थलों को तोड़ा एवं लूट लिया, पर भारतवासी धीरे–धीरे फिर खड़े हो गए। उनका विद्वेष आक्रांताओं के प्रति भले ही रहा हो, पर उनके धर्म एवं देवी–देवताओं से नहीं। भारतीयों ने उन्हें भी अपने मंदिरों/मठों में पूरा सम्मान दिया। सर्वधर्म समभाव को बढ़ावा दिया।

भारत की एकता के सूत्र सांस्कृतिक आस्था और धार्मिक कर्मकांड से लेकर घर की रसोईघर, पूजागृह, संध्या वंदन, योग एवं भक्ति आदि इतने सूक्ष्म तरीके से सांस्कृतिक हुए हैं कि शताब्दियों के विदेशी शासन के बाद भी भारत अपनी एकता को अक्षुण्ण रखकर विराट स्वरूप के साथ 21वीं सदी में विश्व का मार्गदर्शन करने को तैयार खड़ा है। आज पूरे विश्व में भारतीय दर्शन, संस्कृति, योग व साधना के साथ–साथ आयुर्वेद की धूम मची हुई है। एलोपैथी के प्रति मोह घटकर लोग प्रकृति एवं विज्ञान के संयोजन योग एवं आयुर्वेद के प्रति जुड़ रहे हैं। लोग अपनी जीवनशैली में बदलाव लाकर मांसाहार की अपेक्षा शाकाहार की महत्ता को समझ रहे हैं। यही सारी बातें भारत ही नहीं पूरे विश्व में "वसुधैव कुटुंबकम" का संदेश देकर "सर्वधर्म समभाव" मानकर अनेकता में एकता का पाठ पढ़ा रहे हैं। प्रत्येक हिन्दुस्तानी जिस भाव से पुष्कर के मंदिरों में सिर झुकाता है, उसी भाव से अजमेर शरीफ में सजदा करता है। वह जिस भाव से स्वर्ण मंदिर में झुकता है उसी श्रद्धा से गिरजाघर भी जाता है। जबकि विश्व की अन्य महानतम शक्तियां अपनी किसी भी किस्म की एकता को नहीं बचा पाईं। इसीलिए भारत एक चिरंतन राष्ट्र है, सनातन राष्ट्र है। भारत की युवा पीढ़ी को इसकी शक्ति के इस वास्तविक, मूल और नैसर्गिक तत्व को समझना होगा, इसे संरक्षित और विकसित करना होगा। तभी भारत 21वीं सदी में विश्व का नेतृत्व कर पाएगा। भारत के युवाओं को पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण नहीं, बल्कि विवेकपूर्ण अनुकरण करना होगा।

डॉ. वर्षा सोमदेवे, (एम.बी.बी.एस.)
सुपुत्री श्री जी.एन. सोमदेवे

हृदय रोग और तपेदिक

हृदय रोग आधुनिक जीवन शैली, खान–पान आदि में आने वाले बदलाव के फलस्वरूप हृदय, फेफड़ों, यकृत, गुर्दों आदि कि बीमारियां तेजी से बढ़ रही है। इनमें हृदय रोग काफी घातक एवं महंगा उपचार है। जिस समय तक हृदय की समस्याओं का पता चलता है, तब तक मूल कारण सामान्यतः काफी बढ़ चुका होता है, क्योंकि वह लम्बी अवधी से उन्नत हो रहा होता है। इसलिये, रोकथाम के लिये जोखिम कारकों में फेर–बदल लाने पर जोर दिया जा रहा है, जैसे, स्वस्थ भोजन और व्यायाम करके तथा धूम्रपान का त्याग करके।

हृदय रोग ऐसे रोगों का समूह है, जो हृदय या रक्त नलिकाओं को क्षतिग्रस्त करते हैं। हालांकि इस शब्द का संबंध ऐसे किसी भी रोग से है जो हृदयनलिका तंत्र को प्रभावित करता हो। व्यवहार में, हृदयनलिका रोग का उपचार हृदयरोगतज्ञों, वक्ष शल्यचिकित्सकों, रक्तनलिकाओं के शल्यचिकित्सकों, नाड़ीरोगतज्ञों और व्यवधानी रेडियोलाजिस्टों द्वारा किया जाता है, जिनका कार्यक्षेत्र उपचाराधीन अवयव तंत्र पर निर्भर करता है। विभिन्न विशेषज्ञताओं के बीच काफी आपसी आच्छादन होता है और यह आम बात है कि एक ही अस्पताल में कतिपय प्रक्रियाएं भिन्न प्रकार के विशेषज्ञों द्वारा की जाती है।

अधिकांश देश हृदय रोग की उच्च और बढ़ती दरों का सामना कर रहे हैं। प्रति वर्ष कैंसर की अपेक्षा हृदय रोग से कहीं अधिक मृत्यु होती है। पिछले कुछ वर्षों में स्त्रियों में हृदय रोग का क्षेत्र बढ़ने लगा है और स्तन कैंसर की अपेक्षा अधिक स्त्रियों की मृत्यु इससे हुई है। एक बड़े वैज्ञानिक अध्ययन में देखा गया है कि उक्त नलिकीय क्षति किशोरावस्था से जमा होती रहती है, जिससे प्राथमिक रोकथाम के प्रयास इसी समय से ही किया जाना आवश्यक हो गया है।

अध्ययनों में पाया गया है कि, हृदय रोग के पूर्वगामी किशोरावस्था में प्रारंभ होते हैं। लक्षण प्रकट होने की प्रक्रिया कई दशकों में विकसित होती है और बचपन में ही शुरू हो जाती है। अध्ययन में देखा गया कि 7–9 वर्षों के युवाओं की सभी महाधमनियों और आधी से अधिक दायीं करोनरी धमनियों में अंतःस्तर की विक्षतियां प्रकट होने लगती हैं फिर भी अधिकांश किशोर अन्य जोखिमों जैसे, एचआईवी, दुर्घटनाओं और कैंसर के बारे में हृदयनलिका रोग की अपेक्षा अधिक चिंतित रहते हैं।

यह बात अत्यंत महत्पवूर्ण इसलिए है क्योंकि हर 3 में से 1 लोग हृदयरोग से उत्पन्न समस्याओं से मर जाते हैं, हृदयनलिका रोग की लहर को रोकने के लिये, प्राथमिक रोकथाम इस बात की शिक्षा और जागृति से शुरू होती है कि हृदयनलिका रोग सबसे बड़ा खतरा है और इस रोग की रोकथाम के उपाय किये जाने चाहिए।

अध्ययन से पता चला है कि भूमध्यसागरीय देशों में आहार हृदयनलिका रोगों के परिणामों को बेहतर बनाता है। विटामिनों को किसी भी तरह से हृदयनलिका रोग की रोकथाम में प्रभावकारी नहीं पाया गया है।

हृदयरोग को ठीक करने या उसकी रोकथाम करने के लिए फेर–बदल करने योग्य जोखिम कारकों में शामिल हैं– सब्जियों से प्राप्त रेशों से भरा लेकिन संतृप्त वसा और कॉलेस्ट्राल की कम मात्रा वाला आहार, तंबाकू के सेवन से परहेज और धूम्रपान से बचाव, रक्तचाप के बढ़े होने पर उच्चरक्तचाप विरोधी औषधियों से उसे कम करना, मधुमेह का कड़ा नियंत्रण, यदि वजन अधिक हो या मोटापा हो तो बीएमआई में कमी लाना, दैनिक गतिविधि को 30 मिनट के मध्यम से प्रबल व्यायाम तक बढ़ाना और जीवन में भावनात्मक दबाव को कम करना।

हृदयनलिका रोग का उपचार संभव है और प्रारंभिक इलाज प्राथमिक रूप से आहार और जीवनशैली में व्यावधानों पर केन्द्रित होता है। रोकथाम में दवाइयां भी उपयोगी हो सकती हैं।

तपेदिक

तपेदिक, जिसे क्षयरोग, राजयक्ष्मा, यक्ष्मा तथा ट्यूबरक्लोसिस जिसको संक्षेप में टी.बी. कहते हैं, यह एक सामान्य किंतु घातक संक्रामक रोग माना जाता है। यह जीवाणु से फैलता है, मुख्य रूप से माइक्रोबैकटीरियम ट्यूबरक्लोसिस से। यह आम तौर पर फेफड़ों को प्रभावित करता है किंतु यह केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र लिम्फतंत्र, संचार तंत्र, मूत्रजनन तंत्र, अस्थि, जोड़, यहां तक कि त्वचा को भी प्रभावित करता है।

विश्व की एक तिहाई आबादी के शरीर में इस रोग का संक्रमण पाया जाता है। प्रति 1 सेकण्ड में 1 नया संक्रमण भी होता है, किंतु प्रत्येक संक्रमित व्यक्ति इस रोग से ग्रस्त नहीं होता है इसके छिपे संक्रमण से ग्रस्त 10 में से 1 को रोग शुरू हो जाता है। यदि इसका इलाज नहीं मिले तो आधे रोगी काल का ग्रास बन जाते हैं।

विश्व में 2004 में 14.6 मिलियन सक्रिय मामले थे जहां रोग गंभीर दशा में चला गया था, 8.9 मिलियन नये मामले सामने आये थे तथा 1.6 मिलियन मौतें हुई थी। ये ज्यादातर विकासशील देशों में हुई थी। विकसित देशों से भी यह रोग पूर्णत गायब नहीं हुआ है वहां लोगों का प्रतिरक्षा तंत्र दुर्बल हो गया है क्योंकि वे लोग प्रतिरक्षा तंत्र शमनकारी औषधि लेते हैं। नशीले पदार्थों के सेवन से तथा एड्स इसके सबसे बड़े कारण हैं। एच.आई.वी. संक्रमण बढ़ जाने से तथा टी.बी. नियंत्रण कार्यक्रम के दुर्गम हो जाने से यह रोग फिर से उभर गया है। इसके अलावा दवाप्रतिरोधी तपेदिक के उभार से महामारी की तरह यह रोग फैल रहा है। 2000 से 2004 के बीच 20 प्रतिशत टी.बी. मामलों में जीवाणु मानक उपचार के प्रति सहनशील हो गया था जबकि 2 प्रतिशत मामलों में यह द्वितीय पंक्ति की औषधियों के प्रति भी प्रतिरक्षा रखने लगा था। विश्व स्वास्थ्य संगठन के मतानुसार 1993 से यह रोग विश्व भर में आपातकालीन स्वास्थ्य समस्या बन चुका है।

क्षयनिरोधक टीके का सर्वप्रथम प्रयोग 1912 में वाइल हेली द्वारा किया गया था। अब वह समस्त विश्व में क्षयनाश का सार्थक साधन माना जाता है। अनेक राष्ट्रों, जैसे रूस, चेकोस्लोवेकिया, फिनलैंड तथा नॉर्वे में क्षयनिरोधक टीका लगवाना विधान द्वारा अनिवार्य कर दिया गया है।

नियमित अंतराल के पश्चात औषधि की अल्प मात्राएं लेते रहकर रोगसंक्रमण का निरोध करने की घोषणा नवीन नहीं है। मलेरिया ज्वर का आना कुनैन इत्यादि औषधियों की नियमित मात्रा के सेवन से रोका गया है।

क्षय अवश्यमेव सोचनीय रोग माना जाना चाहिए। क्षय के किसी रोगी का पता चलने पर यह ज्ञात करना अनिवार्य हो जाना चाहिए कि उसे रोग का संक्रमण कहां से हुआ और स्वयं इस रोगी ने अन्य कितने लोगों को रोगसंक्रमित किया है। दूध का भी पूर्वपरीक्षण किया जाना चाहिए। यदि दूध को उबालकर पीने के अभ्यास को सर्वमान्य किया जा सके तो यह अतिउत्तम होगा।

क्षय के केवल उन्हीं रोगियों को भर्ती किया जाता है जिनका रोग या तो निष्क्रिय किया जा सकता है या रसायन चिकित्सा अथवा शल्य प्रणाली से दूर किया जा सकता है। प्रत्यक्ष है कि ऐसे अस्पतालों में आधुनिकतम शल्य प्रणाली का प्रयोग करने की सुविधाएं होनी चाहिए। इन अस्पतालों में रोगियों का वासकाल न्यूनतम होना चाहिए जिससे अन्य रोगियों को भी चिकित्सा का अवसर प्राप्त हो सके।

वेदों के पहले से ही संभवतः भारत में क्षय रोग विद्यमान था, क्योंकि ऋग्वेद में क्षय का ही राजयक्ष्मा के नाम से वर्णन आता है।

टीबी किसी को भी हो सकती है, किंतु बच्चे, वृहद, धूम्रपान करने वाले, भीड़ भरी जगहों पर रहने वाले, एचआईवी संक्रमित, बेघर और कमजोर लोगों को इसका खतरा अधिक होता है। टीबी का इलाज पूरा किए बिना छोड़ देना बेहद खतरनाक होता है। टीबी बहुल क्षेत्र में यात्रा करने से भी टीबी हो सकती है। विश्व की एक तिहाई आबादी आज भी टीबी से ग्रस्त है। लंबे समय तक खांसी होना, खांसते समय खून आना, सोते समय पसीना आना, वजन घटना, लगातार सांस फूलना टी.बी. के लक्षण हैं। इस महामारी के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए 24 मार्च को विश्व टी.बी. दिवस मनाया जाता है।

टी.बी. का उन्मूलन न होने के अनेक कारण हैं। सरकारी संसाधन समिति है इसलिए मजबूरी में मरीजों को निजी चिकित्सालयों का सहारा लेना पड़ता है। अपॉश्चरिकृत दूध पशुजन्य टीबी का सबसे बड़ा खतरा है। पशु से निकाला गया दूध संक्रमित हो सकता है। शहरी क्षेत्र में ऐसी समझ है कि गांव से मंगाया गया दूध उत्तम होता है जबकि इसी तरह के दूध से टीबी का बैक्टेरिया सीधे आप तक पहुंच सकता है। पशु डेयरी से सीधे दूध लेना भी खतरनाक है। वैज्ञानिक पद्धति से पॉश्चरिकृत दूध ही सर्वोत्तम है। बच्चों के लिए टीबी का टीका उपलब्ध है। जब भी किसी बच्चे को बीसीजी का टीका लगता है तो वह भविष्य में टीबी के बैक्टेरिया के विरूद्ध रोग प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न कर देता है। टीबी स्पर्श करने से कभी नहीं फैलती अतः बच्चे को स्तनपान कराने से माता और बच्चे को काई खतरा नहीं होता। बार–बार नजला जुकाम और खांसी हो तो तुरंत टीबी की जांच करानी चाहिए। उचित होगा कि 2–3 वर्ष के अंतराल में घर के सभी लोगों की टीबी जांच करायी जाए। स्वच्छता और सावधानी टीबी को दूर रखने का सरल उपाय है। टीबी के निवारण के लिए विस्तृत कार्यक्रम की आवश्यकता है इसके लिए प्रत्येक राज्य में एक स्वतंत्र विभाग की आवश्यकता है।

डॉ. अमर सिंह सचान, राजभाषा अधिकारी

काव्य सुधा

आम आदमी डरा हुआ है

आज सुबह मैं गया टहलने, देखा बीच सड़क पर एक जवान,
दोनों हाथों में थे दो पत्थर, था कुछ वह लहू–लुहान।
ऊंचे स्वर में बुला रहा था– आओ सुनो सब मेरी बात,
'पगला' कह कर लोग गुजरते, क्यों हम करें वक्त बरबाद।।

मुझे देख वह दौड़ पड़ा और आ गया बिल्कुल मेरे पास,
दो पल को मैं बेहद घबराया, दिल धड़का व अटकी सांस।
बोला अंकल! बात सुनो तुम–पागल है यह दुनिया सारी,
मुझे डांटती और मारती, कोई भी सुनता नहीं हमारी।।

बोला–अंकल जी! यह दुनिया, केवल पत्थर का जंगल है,
यहां जानवर ही रहते हैं, बस लड़ने–मरने का दंगल है।
यहां न कोई मानवता है, और न ही कोई भाई–चारा,
जो जीता बस वही सिकंदर, बंदर वह जो दंगल हारा।।

जीतेगा बस वही यहां पर जो गुंडा, बदमाश–दबंग,
या फिर वह जो चोर–उचक्का, बेईमान और लफंग।
जंगल का कानून यही है, आप मानें या फिर न मानें,
आंखें होकर सब अंधे हैं, जान–बूझ बनते अनजाने।।

इस जंगल का राजा कोई शेर नहीं, बस एक सियार है,
इसीलिए डर नहीं किसी में, चोर–लुटेरों की बहार है।
कोई सियार की बात न सुनता, चौतरफा लूट मची है,
हर गरीब जंगलवासी बस निराश, हताश और दुःखी है।।

क्या–क्या कहें आपसे अंकल, खाने–पीने का अकाल है,
यह भी भ्रष्ट अफसरों, नेताओं और माफिया की चाल है।
मैंने इसीलिए इनके खिलाफ आंदोलन एक चलाया है,
आप भी आना जंतर–मंतर, जनता को वहीं बुलाया है।।

मुझे लगा सचमुच ही इस पगले की बातों में है दम,
सच कहता है जंगलराज है, कोई किसी से नहीं है कम।
यहां भ्रष्ट और बेईमान घूम रहे हैं, निर्भय और बेधड़क,
आम आदमी डरा हुआ है, घरों में दुबका छोड़ सड़क।।

– नत्थू अग्रवाल

बीते हुए ग़मों को दीपक बनाइये

बीते हुए ग़मों को दीपक बनाइये।
आने वाले कल को रस्ता दिखाइये।।
दफ़न हैं जो दर्द सीने के अँधेरों में।
आज उन्हें मील के पत्थर बनाइये।।

क्या हुआ जो कल था
वह आज नहीं है।
ज़िन्दगी की हर शै
मुमताज़ नहीं है।

हर दर्द को अपने जिस्म का हिस्सा बनाइये।
कम हो किसी का दर्द उसे वह किस्सा सुनाइये।।
खुशी को तो हर शख़्स लगाता है गले से।
हर ग़म को खुशी से आप गले लगाइये।।

(रचनाकार श्री नितिन अग्रवाल, स. प्र. के पिता हैं)

श्रीमती उमा सोमदेवे

कौन बचाएगा बचपन?

सरकार ने 14 साल तक के बच्चों
के काम करने पर रोक लगाई हुई है
पर ऐसे बच्चे घर में तो क्या
खतरनाक उद्योगों में भी काम करते मिल जाएंगे
इन कामगारों की आवाज उठाने वाला
कोई भी नहीं है।
काम और लानत के बोझ से इन्हें उबारने वाला कोई नहीं है।
ये सुबह से शाम तक दुत्कारे जाते हैं।
खाना कम और लात–जूता ज्यादा खाते हैं।

जरा सी कोताही पर गाली गलौच
व वक्त पर खाना और समय पर मजदूरी
अन्याय सहना है इनकी मजबूरी
यह सिलसिला रूकना चाहिए
बचपन को अन्याय और शोषण से बचाना चाहिए
इसमें सरकार के साथ–साथ
समाज को भी आगे आना चाहिए।

"वसांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही।।"

(जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर दूसरे नये वस्त्रों को ग्रहण करता है, वैसे ही जीवात्मा शरीरों को त्यागकर दूसरे नये शरीरों को प्राप्त होता है।)

'शोक समाचार'

"श्री जी.एन. सोमदेवे, सहायक महाप्रबंधक एवं संपादक 'आवास भारती' की माताजी श्रीमती शांताबाई सोमदेवे 92 वर्ष की आयु में उनके पैतृक निवास ग्राम कांद्री, तहसील रामटेक, जिला नागपुर में दिनांक 3 फरवरी, 2012 को अपना स्वस्थ एवं निरोग जीवन जीते हुए इहलोक छोडकर स्वर्गवासी हो गई। राष्ट्रीय आवास बैंक परिवार दिवगंत आत्मा की शांति हेतु ईश्वर से प्रार्थना करते हुए श्री सोमदेवे एवं उनके परिवार के प्रति अपनी गहरी शोक–संवेदना प्रकट करता है।"

सुभाषित

"परमात्मा को बाहर खोज रहे हो बडी भूल है तुम्हारी। उसे स्वयं में खोजो। विधि सरल है–स्वयं को अपना मित्र बनाओ फिर तीसरे की आवश्यकता नहीं। धर्म और धार्मिकता का विवाद मत करो केवल मानवता पैदा करों। इतना करलो तो परमात्मा तुम्हारे भीतर जन्म लेगा। कोशिश करों।"

– 'स्वामी तथागत भारती'

पंजी. सं. दिल्ली इन/2001/6138

आपके घर की सुरक्षा और आपके मार्टगेज का ध्यान रखता है

रिवर्स मार्टगेज
ऋण सामर्थ्यकारी वार्षिकी

रिवर्स मार्टगेज ऋण सामर्थ्यकारी वार्षिकी के द्वारा, भारत में गृह स्वामी वरिष्ठ नागरिक वृद्धावस्था में अपनी आवासीय सम्पत्ति से धन प्राप्त करके, उसी में निवास करते हुए, आर्थिक सुरक्षा प्राप्त कर सकते हैं। वरिष्ठ नागरिक अपना मकान ऋणदाता को गिरवी रख सकते हैं जो किसी जीवन बीमा कंपनी के माध्यम से उन्हें आजीवन आवधिक भुगतान करता रहेगा। इस योजना के तहत पति–पत्नी दोनों संयुक्त ऋणकर्ता हो सकते हैं। वरिष्ठ नागरिक ऋणकर्ताओं को अपने जीवन काल में, जब तक वे जीवित रहते हैं और सम्पत्ति पर कब्जा रखते हैं, मूल राशि और ब्याज का भुगतान नहीं करना होगा। ऋण राशि की देनदारी तभी होगी जब ऋणकर्ता की मृत्यु हो जाए या उस मकान को स्थायी रूप से छोड़ कर चला जाये।

विशेष लाभ

- आजीवन नकदी उपलब्धता
- आजीवन स्वामित्व और मकान में निवास
- विकल्प एकमुश्त भुगतान
- मकान के पुनर्मूल्यांकन के आधार पर वृद्धिशील ऋण
- ऋणकर्ता की देनदारी मकान के मूल्य से अधिक नहीं होगी

संकेतात्मक आरएमएलईए भुगतान

आयु	सम्पत्ति का मूल्य	एलटीवी	नियत मासिक आरएमएलईए* रेंज
60	1000000	60%	रु. 2191 से रु. 3459
65	1000000	60%	रु. 2267 से रु. 3987
70	1000000	60%	रु. 2419 से रु. 4816
75	1000000	70%	रु. 3311 से रु. 7166

*शर्तों सहित नियत सेवा प्रभार

उपर्युक्त प्राक्कलन संकेतात्मक हैं और वास्तविक राशि ऋणकर्ता की आयु, वार्षिकी विकल्प और प्राथमिक ऋणदाता संस्थानों की अन्य शर्तानुसार।

कृपया नोट करें – रा.आ.बैंक ने रिवर्स मार्टगेज ऋण सामर्थ्यकारी वार्षिकी योजना संकल्पित की है, जिसे विभिन्न बैंकों और आवास वित्त कंपनियों द्वारा क्रियान्वित किया जा सकता है। रा.आ.बैंक व्यक्तियों को सीधे ऋण नहीं देता है। पूरे विवरण के लिये, कृपया प्राथमिक ऋणदाता संस्थानों, जो योजना को पेश कर रहे हैं, के नियमों एवं शर्तों को पढ़ें।

रा.आ.बैंक की पहलों एवं प्रयासों के विवरण के लिए, कृपया सम्पर्क करें

राष्ट्रीय आवास बैंक NATIONAL HOUSING BANK
(भारतीय रिज़र्व बैंक के संपूर्ण स्वामित्व में) www.nhb.org.in (Wholly owned by the Reserve Bank of India)
इंडिया हैबिटैट सेंटर, कोर 5ए, 3–5 तल, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003, फोन: 011–24649031–35

अहमदाबाद • चेन्नई • बेंगलूरु • मुम्बई • नई दिल्ली (मुख्यालय) • हैदराबाद • कोलकाता • लखनऊ • पटना • भोपाल

कवर व पृष्ठ साज–सज्जा एवं चित्रांकन : मंजू सिंह : 9868455955
मुद्रण तिथि : 30.04.2012 मुद्रक : अलकनन्दा एडवरटाइजिंग